चन्दामामा
अक्तूबर १९८७
२.५० रु

डायमंड कामिक्स में

दीवाली पर

एक **धमाका** डायमंड कॉमिक्स का

कार्टूनिस्ट प्राण का

चाचा चौधरी-4

128 रंगीन पृष्ठों में
चाचा चौधरी और
साबू के
धड़ाम बड़ाम कारनामें

चाचा चौधरी के अन्य

अन्य नये डायमंड कॉमिक्स डाइजेस्ट—

इस माह के नये डायमंड कॉमिक्स—

डायमंड कामिक्स प्रा. लि. 2715, दरियागंज, नई दिल्ली-110002

अक्तूबर 1987

★

विषय-सूची

★

एक प्रति : २-५०

वार्षिक चन्दा : ३०-००

चन्दामामा

संस्थापक : 'चक्रपाणी'
संचालक : नागिरेड्डी

कोई मनुष्य केवल रसिक हो, पर्याप्त नहीं है। उसे रस का ज्ञान भी होना चाहिए और उसमें श्रेष्ठ और अश्रेष्ठ की पहचान भी होनी चाहिए। कविता और कला के क्षेत्र में उत्तम अभिरुचि और रसज्ञता के अभाव में यदि कोई काव्य-कला का आलोचक बन बैठता है तो उसे एक दिन अवश्य ही अनादर का पात्र बनना पड़ता है। 'रसज्ञ मुखिया' शीर्षक कहानी में इस तथ्य का बोध सहज ही हो जाता है।

अमर वाणी

अर्थनाशं, मनस्तापं, गृहे दुश्चरितानि च ।
वंचनं चापमानं च, मतिमान् न प्रकाशयेत् ॥

[बुद्धिमान मनुष्य को धन की हानि, मानसिक व्यथा, परिवार के भीतर हो रहे दुराचरण, वंचना तथा अपमान को प्रकट नहीं करना चाहिए।]

वर्ष : ४० | अक्तूबर १९८७ | अंक : २

एक प्रति : २-५० :: वार्षिक चन्दा : ३०-००
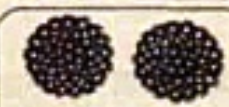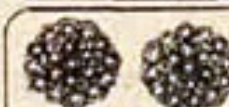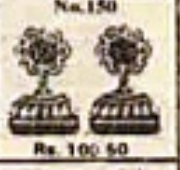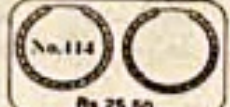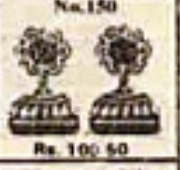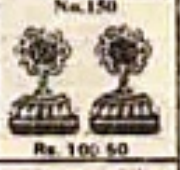
'मेरी'

22 कैरट् स्वर्ण-आवृत जेवरों की चातुरी में है वीश्व नामी उत्तमता की प्रकृति। चमकीला सुन्दरी। सब की मन पसन्द, बेजोड़ रंगरूप में गारंटी जेवरों। मंगवाते वक्त जेवरों की संख्या सूचीत करे। वी पी पी. खर्च अलग। मुफ्त केटलाग के लिए लिखे।

MERI GOLD COVERING WORKS

P.O. BOX: 1405, 14, RANGANATHAN STREET,
T. NAGAR, MADRAS-600 017, INDIA.

प्राचीन चरित्रः

निशाकर

दण्डाकारण्य में एक मुनिवाटिका के समीप धर्मिष्ठा नाम की एक स्त्री रहा करती थी। उसके निशाकर नाम का एक ही पुत्र था। निशाकर बड़ा अयोग्य, मंदबुध्दि होने पर भी बहुत शरारत किया करता था।

एक दिन निशाकर अचानक कहीं चला गया, घर न लौटा। उसकी माता धर्मिष्ठा ने सर्वत्र उसकी खोज की, पर उसका पता न लगा। अड़ोस-पड़ोस वालों ने बताया कि हो सकता है निशाकर को कोई बाघ या क्रूर जंतु उठा ले गया हो। धर्मिष्ठा विचलित नहीं हुई और बड़े धैर्य के साथ अपना समय व्यतीत करने लगी।

कुछ वर्ष बीत गये। एक दिन धर्मिष्ठा मुनिवाटिका से गुज़र रही थी कि उसे मार्ग के पार्श्व में स्थित एक कुएं से मानव का स्वर सुनाई दिया। कुएं पर एक चट्टान ढंकी हुई थी। उसने चकित होकर कुएं में झांका और बोली, "किसने इस कुएं को चट्टान से ढंक दिया है?"

उसी क्षण कुएं में से निशाकर ने पुकारा-'माँ'। अपने पुत्र के कंठ स्वर को पहचान कर धर्मिष्ठा ने आसपास के लोगों को मदद के लिए पुकारा तथा कुएं पर से चट्टान हटाकर निशाकर को ऊपर निकला।

पता लगा कि निशाकर के चंचल कारनामों से तंग आकर किसी ने उसे कुएं में ढकेल दिया था और वह बाहर न निकल सके, इसलिए कुएं को चट्टान से ढंक दिया था। निशाकर कुएं लगे पेड़ एवं लताओं के फल-फूलों तथा ज़मीन से प्राप्त कंद-मूलों से अपनी भूख मिटाते हुए वहाँ रहने लगा। गहराई से इस बात का चिन्तन-मनन भी करने लगा कि उसकी ऐसी दशा क्यों हुई? निरन्तर ध्यान करने के फलस्वरूप उसे अपने पूर्वजन्मों का ज्ञान प्राप्त हुआ। उसे प्रतीति हुई कि पूर्व जन्मों के पापों के फल स्वरूप ही उसकी ऐसी दुर्गति हुई है। उसका मन ज्ञान से निर्मल होगया। कुएं से बाहर आकर उसने कठिन तपस्या की और त्रिकालज्ञानी महामुनि का पद प्राप्त किया।
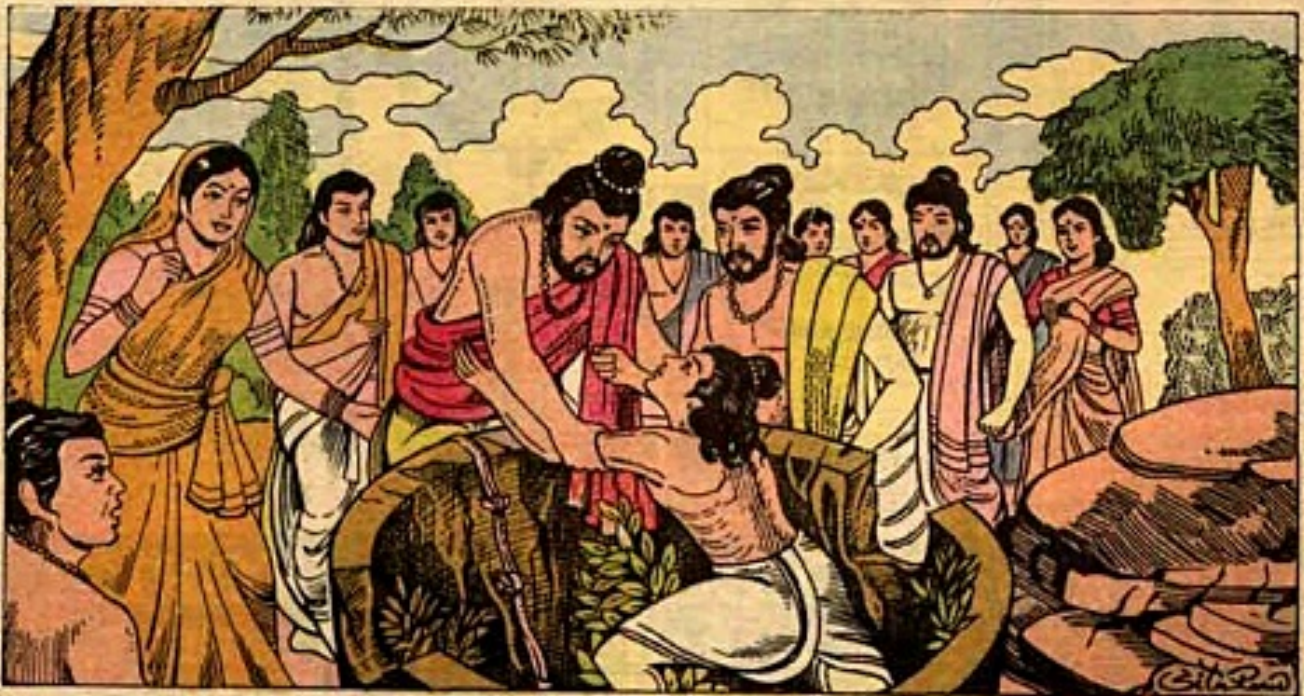
ताबीज

रामगढ़ राज्य में गंगाराम डाकू एक आंतक बना हुआ था। उसने एक दिन राज्य का खज़ाना लूटा और वेश बदलकर इस विचार से राजधानी लौटा कि राजा उसे पकड़ने के लिए कौन से प्रयत्न कर रहे हैं। खज़ाना उसने एक गुप्त स्थान में छिपाया था।

डाकू गंगाराम एक सराय से होकर गुज़र रहा था कि उसकी दृष्टि सराय के चुबतरे पर सोरहे एक साधु पर पड़ी। गंगाराम ने सुन रखा था कि साधु-संतों में अनेक ऋधि्दयां-सिधि्दयां होती हैं और उनकी . वस्तुएं तक उन शक्तियों से पूर्ण होती हैं, । यही सोचकर गंगाराम धीमी गति से साधु के निकट पहुँचा और खोजने लगा कि शायद साधु के पास कोई ऐसी चीज़ हो, जिसमें कोई अलौकिक महिमा हो। तभी उसकी दृष्टि साधु की कोहनी के पास बंधे ताबीज पर पड़ी। उसने उस ताजीब को धीरे से खोलकर अपनी बाँह पर बांध लिया।

अभी ताजीब बांधे एक क्षण भी नहीं हुआ था कि डाकू जोर से चिल्ला उठा—"गंगाराम डाकू मैं ही हूँ। राज्य का ख़जाना मैंने ही लूटा है।"

अनायास ही अपने मुँह से सत्य प्रकट होते देख गंगाराम घबरा गया। और उसने ताबीज खोलकर दूर फेंक दिया। लेकिन, ताबीज तुरन्त वेग से आकर फिर उसकी बाँह में बंध गया। इस बीच उसकी चीख-पुकार सुनकर राजसैनिक वहाँ आ पहुँचे और उसे राजा के पास खींच ले गये।

राजा प्रद्योतसिंह ने सैनिकों के मुँह से सारा वृत्तान्त सुनकर कहा, "कोई भी चोर या डाकू अपने चोर-डाकू होने की घोषणा नहीं कर सकता। तुम लोग इसके अड्डों की तलाशी लो।"

राजा का आदेश पाकर सैनिकों ने गंगाराम के मुख्य निवास की तलाशी ली और उसके गुप्त स्थानों से सारा लूटा हुआ माल लेकर वापस लौट

सुशीला रस्तोगी

आये ।

राजा प्रद्योतसिंह ने विस्मित होकर कहा, "इसमें सन्देह नहीं कि यह गंगाराम डाकू है । पर इसके सच बोलने के पीछे कोई राज़ होना चाहिए । उस राज़ के प्रकट होने तक इसे कारागार में डाल दो!"

गंगाराम चालाक डाकू था । उसने शीघ्र ही कारागार के पहरेदार से दोस्ती कर ली और बोला, "रामसिंह भाई, मेरे इस ताबीज में अद्‌भुत शक्तियाँ हैं । एक बार इसे अपनी बाँह पर बाँध कर देखो तुम्हें खुद पता लग जायेगा ।"

रामसिंह पहरेदार ने अपनी बाँह पर ताबीज बांध लिया, फिर बोला, "पहरा देते समय मैं हमेशा सोता रहता हूँ, लेकिन आज तक इस बात का कोई इसलिए पता नहीं लगा पाया, क्योंकि गहरी नींद सोने पर भी मेरी आँखें खुली रहती हैं ।"

पहरेदार का रहस्य जान लेने के बाद आधीरात के समय डाकू गंगाराम ने अपनी करामात दिखाई । उसने छड़ों को मरोड़कर जगह बनायी और कारागार से निकल भागा ।

सुबह होते ही गंगाराम डाकू को न देख रामसिंह के होश उड़ गये । वह सारी बात समझ गया और राजा प्रद्योतसिंह के पास जाकर बोला, "महाराज, गंगाराम डाकू भाग गया है । यह मेरी गलती से ही हुआ है ।"

पहरेदार की बात सुनकर राजा प्रद्योतसिंह क्रुध्द होकर बोले, "डाकू कैसे भागा?"

"महाराज! उस डाकू ने मुझे एक ताबीज दिया । उसके प्रभाव से मैंने अपनी सच्चाई प्रकट कर दी और डाकू को भागने का अवसर मिल गया ।" यह कहकर रामसिंह ने सारी बात सुनाई और ताबीज राजा को सौंप दिया ।

राजा प्रद्योतसिंह का क्रोध अभी ठंडा नहीं हुआ था । उन्होंने ताबीज को दूर फेंक दिया । पर वह ताबीज लौटकर राजा की बाँह से लिपट गया। राजा बुद्धिमान थे । वे तत्काल समझ गये कि किसी दूसरे व्यक्ति के ग्रहण करने पर वह ताबीज उनसे छूट सकता है । पर राजा प्रद्योतसिंह उस ताबीज का कुछ उपयोग करना चाहते थे । उन्होंने यह निश्चय किया कि एक दिन के लिए ताबीज को अपने पास रखा जाये और इस ताबीज के जरिये यह पता लगाया जाये कि राजा के प्रति

राजकर्मचारियों और प्रजाजनों की कैसी धारणा है ।

दूसरे दिन राजा प्रद्योतसिंह ने सभा बुलायी तथा एक सभासद विश्वम्भर को पास बुलाकर ताबीज उसके हाथ में बांध दिया । विश्वम्भर ऊँचे स्वर में चिल्लाकर बोला, "महाराज! जनता पर करों का अधिक बोझ डाले बिना जिस दिन आप शासन करने में समर्थ हो जायेंगे, उसी दिन हम आपको एक सच्चा राजा मानेंगे ।"

इसके बाद राजा प्रद्योतसिंह ने एक साधारण राजकर्मचारी के हाथ में ताबीज बांधा । उसने कहा, "यह राजा हमें परिवार के भरण पोषण के लिए अपर्याप्त वेतन देता है और काम कसकर लेता है । "

अंत में राजा प्रद्योतसिंह अपने सेनापति के हाथ में ताबीज बांधकर उसकी सम्मति की प्रतीक्षा करने लगा । सेनापति वीरराय बड़े अन्दाज़ से बोला, "क्या ही अच्छा हो कि मैं स्वयं सिंहासन पर बैठ जाऊँ । राजा बनने के बाद मेरे सारे अरमान पूरे हो जायेंगे ।"

इन सारे वक्तव्यों से राजा का मन विकल हो उठा । उस रात राजा प्रद्योतसिंह को नींद नहीं आयी । मैं आज तक इन्हीं लोगों पर विश्वास करता रहा । यह मेरी मूर्खता है या यह दुनिया ही ऐसी है? राजा रात भर यह सब स़ोचकर दुखी होता रहा ।

प्रातःकाल होते ही राजा प्रद्योतसिंह ने मंत्री धर्मदेव को बुला भेजा और उसे सारा वृत्तान्त
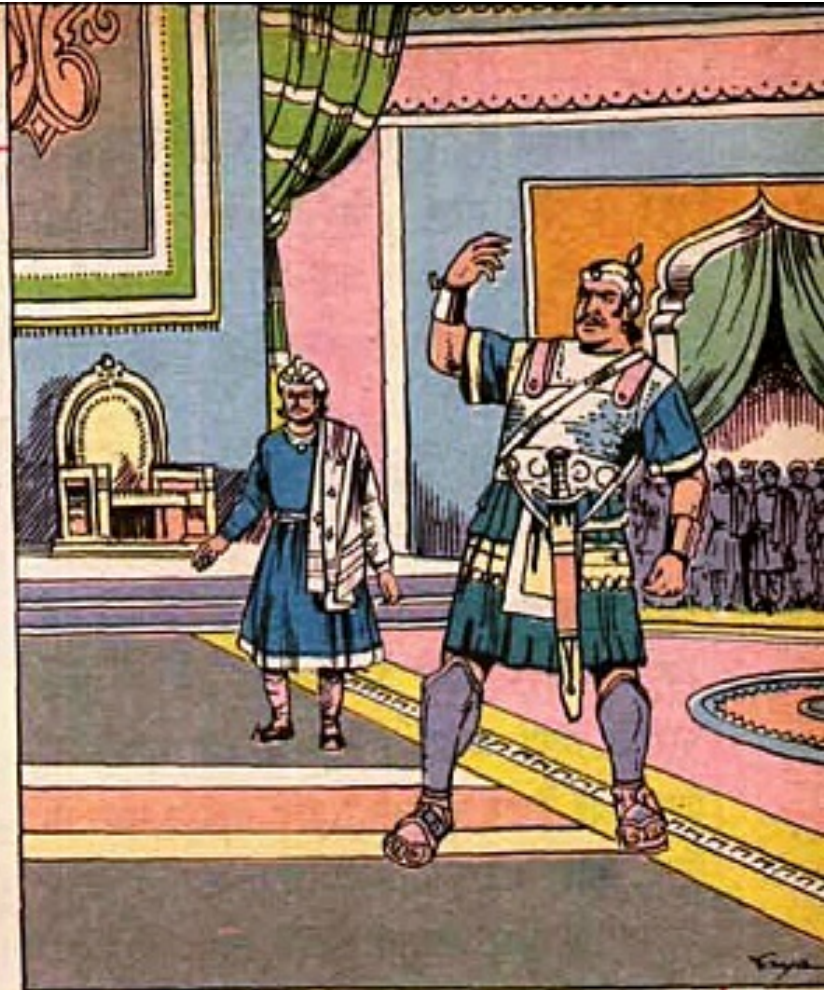
सुनाकर कहा, "मंत्रीवर, न जाने क्यों मेरे हृदय में राज्य-शासन के प्रति विरक्ति पैदा होगयी है ।"

मंत्री धर्मदेव मुस्कराकर बोला, "महाराज! आपकी सारी विकलता और इस विरक्ति का कारण यह अशुभ ताबीज है । इस ताबीज के माध्यम से मनुष्यों के हृदय के रहस्य को जानना भारी भूल है । आपके सेवक यदि आपके आलोचक हैं तो आपके प्रशंसक भी हैं । मैं तो आपको यही परामर्श दूँगा कि आप सबसे पहले इस ताबीज से पिंड छुडा लीजिए! इसके बाद सब कुछ अपने आप ठीक हो जायेगा ।"

राजा को मंत्री की सम्मति अच्छी लगी । सचमुच ही यह ताबीज उसके कष्ट का कारण बन गया था । राजा ने इस ताबीज को किसी को दे देना चाहा । उसने सभा में उपस्थित प्रत्येक व्यक्ति

को सम्बोधन कर उस ताबीज को अपने हाथ में लेने के लिए कहा । पर अब तक सभी उस ताबीज के प्रभाव से परिचित हो चुके थे । इसलिए किसी ने भी उस ताबीज को स्वीकार नहीं किया ।

राजाप्रद्योतसिंह के सामने दूसरा संकट उपस्थित हो उठा । उसने नगर में इस आशय का ढिंढोरा पिटवा दिया कि जो व्यक्ति इस ताबीज को अपनी बाँह में बांध कर रखेगा, उसे बहुमूल्य पुरस्कार दिया जायेगा । फिर भी उसे बांधने के लिए कोई तैयार न हुआ । अब ताबीज राजा के लिए एक जटिल समस्या बन गया । राजा प्रद्योतसिंह राज्य सम्बन्धी किसी रहस्य को छिपा नहीं पाते थे, इस काण राज्य को हानि हो सकती थी ।

मंत्री धर्मदेव के समक्ष राजा ने फिर सारी बात रखी । राजा प्रद्योतसिंह ने विवश भाव से कहा, "मंत्रीवर! आप ही इस ताबीज से पिंड छुड़वाने का कोई उपाय निकालिये !"

मंत्री धर्मदेव ने राजा प्रद्योतसिंह से तीन दिन का समय माँगा और वहाँ से चला गया ।

तीसरे दिन मंत्री धर्मदेव अपने साथ एक आदमी को लेकर राजा प्रद्योतसिंह की सेवा में उपस्थित हुआ और बोला, "महाराज! इस आदमी ने अपने हाथ में ताबीज बंधवाना स्वीकार कर लिया है । आप ताबीज इसके हाथ में बांध दीजिए!"

राजा प्रद्योतसिंह ने मंत्री के साथ आये उस मनुष्य की बांह में ताबीज बांध दिया । पर वह मौन बना रहा । उसके मुँह से एक भी शब्द न निकला । तब राजा ने उसे बहुमूल्य पुरस्कार देकर कहा, "अभी तक मेरा अनुभव यह रहा है कि लोग इस ताबीज को बांधते ही अपने मन की सच्ची बात प्रकट कर देते हैं । पर आप तो कोई महानुभाव प्रतीत होते हैं, इसीलिए इस ताबीज की शक्ति आप पर थोड़ा भी प्रभाव नहीं डाल पायी ।"

राजा प्रद्योतसिंह के इन वचनों को सुनकर मंत्री धर्मदेव ने मंद मुस्कराकर कहा, "महाराज! यह कोई महानुभाव नहीं, बल्कि एक गूंगा है ।"
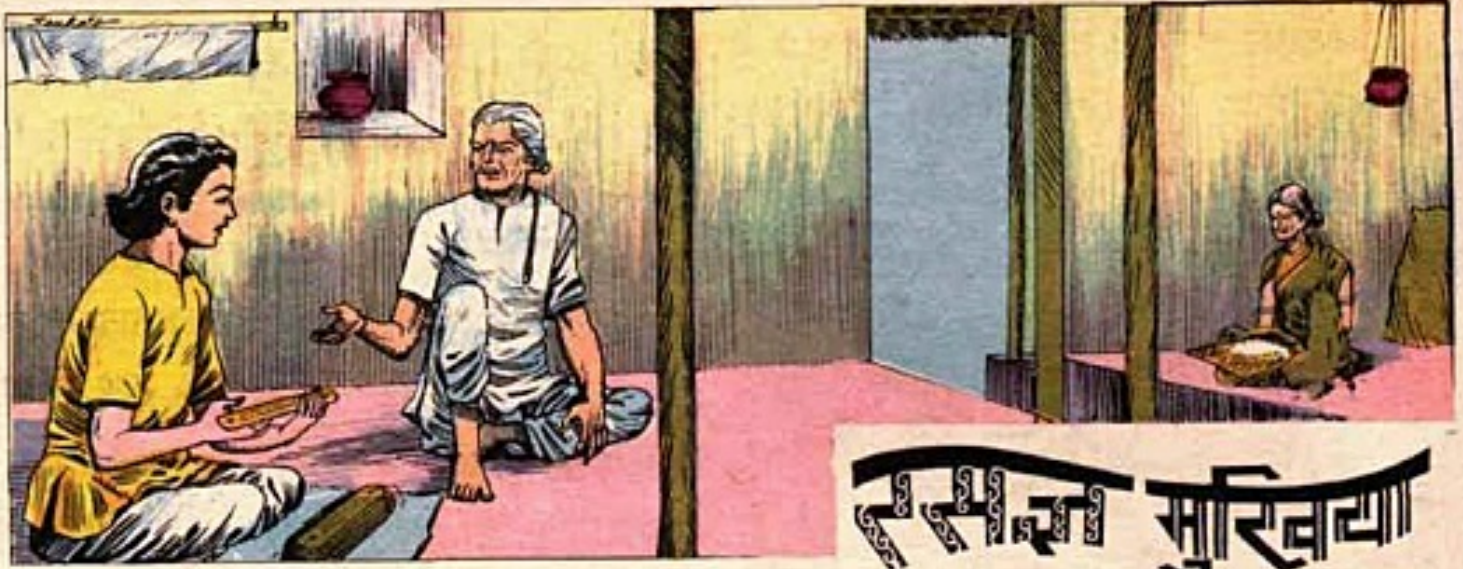
रसज्ञ मुखिया

विद्याभूषण एक किसान गृहस्थ शंकरनाथ का पुत्र था । शंकरनाथ ने अपने पुत्र को गुरुकुल में पढ़ाया था। जब विद्याभूषण स्नातक होकर अपने गांव धरमपुर में लौटा, तब उसके माता-पिता वृध्द हो चुके थे । विद्याभूषण ने खेतीबाड़ी का काम संभाल लिया और बड़ी लगन से अपने माता-पिता की सेवा करने लगा ।

विद्याभूषण में काव्यप्रतिभा थी । वह अपने शेष समय में काव्य रचना भी करता । कविता लिखते समय वह अपना विश्राम और अपनी नींद भी भूल जाता। सब कामों को करते हुए भी उसने अपनी लगन और प्रतिभा से दो वर्ष की अवधि में बारह काव्यग्रन्थों की रचना की ।

विद्याभूषण के पिता शंकरनाथ और माता गौरी अपने पुत्र की प्रशंसा करते न थकते। शंकरनाथ कहता—खेतीबाड़ी का भारी काम, बूढ़े माँ-बाप की सेवा—यह सब होते हुए भी दो वर्ष में बारह काव्यों की रचना करना साधारण बात नहीं है ।

विद्याभूषण कई बार कहता—"अगर कवि को रसज्ञ श्रोता मिल जायें तो कविता-पाठ का आनन्द ही कुछ और होता है। हमारे गाँव धरमपुर में मेरे काव्यों के श्रोता ही नहीं हैं। कई बार तो ऐसा लगता है मानो मेरे भीतर काव्य-रचना का प्रेरणा-स्रोत सूखता जा रहा है ।"

शंकरनाथ अपने पुत्र की पीड़ा को समझता और उसके प्रति सहानुभूति प्रकट कर कहता, "बेटा, कवि को अपनी प्रसिध्दि के लिए राजाश्रय अवश्य प्राप्त करना चाहिए। मेरी इच्छा है कि तुम अपने काव्यों में से एक उत्तम काव्य का चयन करो, और राजधानी विलासपुर में जाकर उसे राजा विक्रमविभूति को सुनाओ!"

"पिताजी, मुझे तो अपना हर काव्य अच्छा लगता है । आवश्यक यह है कि कोई ऐसा काव्य-रसज्ञ मुझे मिले जो मेरे काव्यों में से उत्तम

गणेशदत्त

सुनाना चाहता। सुनाने से लाभ भी क्या? वह उत्तम काव्य का चुनाव तो कर नहीं सकेगा।"

शंकरनाथ को काव्य-गुण के सम्बंध में विशेष जानकारी नहीं थी, पर उसे दुनियादारी का अनुभव गहरा था। उसने विद्याभूषण को समझाकर कहा, "बेटा, बुघ्दिमान व्यक्ति समुद्र के खारे जल से फ़सल पैदा कर सकता है। तुम अपनी बुघ्दिमत्ता का उपयोग करके मुखिया सोमनाथ को अपनी कार्य-सिघ्दि का माध्यम बना लो!" यह कहकर शंकरनाथ ने अपने पुत्र के कान में कोई गुप्त बात कही।

अपने पिता का परामर्श मानकर विद्याभूषण मुखिया सोमनाथ के पास गया और उसे एक-एक कर अपने बारहों काव्य सुना डाले। प्रथम काव्य "वसन्त-मंजरी" को सुनते ही सोमनाथ ने विद्याभूषण की प्रशंसा के पुल बांध दिये और कहा, "वाह, विद्याभूषण, वाह! यह तो अद्‌भुत काव्य है। महाराज विक्रमविभूति की प्रशंसा पाने के लिए यही काव्य सर्वोत्तम है!"

विद्याभूषण ने मुखिया सोमनाथ से विनम्र होकर कहा, "आप सहृदय भावुक और रसज्ञ हैं, इसलिए अन्य काव्यों के सम्बन्ध में भी अपने विचार प्रकट कीजिए!"

विद्याभूषण के मुँह से अपनी प्रशंसा सुनकर मुखिया सोमनाथ बहुत प्रसन्न हुआ और उसने बड़े ध्यान और बड़ी सहिष्णुता के साथ अन्य सारे काव्यों पर अपना विचार व्यक्त किया। पर उसे प्रथम काव्य "वसन्त-मंजरी" जैसा अन्य कोई

काव्य का चुनाव कर सके। इस गाँव में मुझे ऐसा कोई व्यक्ति नज़र नहीं आता, जो इस दिशा में मेरी मदद कर सके।" विद्याभूषण ने कहा।

"क्यों, हमारे गाँव के मुखिया सोमनाथ तुम्हारी मदद अवश्य कर सकते हैं।" शंकरनाथ ने पुत्र से कहा।

धरमपुर में कविता की थोड़ी बहुत समझ रखनेवाला व्यक्ति एकमात्र मुखिया सोमनाथ ही था। पर उसकी रुचि अत्यन्त साधारण थी। हलकी-फुलकी कविता एवं गीतों के अलावा वह साहित्यिक कोटि की उत्तम कविता का प्रशंसक नहीं था। विद्याभूषण इस बात को जानता था।

विद्याभूषण ने शंकरनाथ से कहा, "पिताजी, जो रसज्ञ नहीं है, उसे मैं अपनी कविता नहीं

काव्य रुचिकर नहीं लगा। उन सारे काव्यों में "सूर्य-दर्पण" शीर्षक का काव्य तो उसे बहुत घटिया प्रतीत हुआ।

अपने बारहों काव्यों को सुनाने और उन पर मुखिया सोमनाथ के अभिमत को जानने में विद्याभूषण को दो माह का समय लग गया। इसके बाद उसने बारहों काव्यों को लिया और राजधानी विलासपुर के लिए रवाना होगया। राजधानी पहुँचने पर सौभाग्यवश उसे शीघ्र ही राजा विक्रमविभूति के दर्शन मिल गये।

विद्याभूषण ने पाँच दिन राजा विक्रमविभूति के सम्मुख अपने काव्य का पाठ किया। सबसे बड़े आश्चर्य की बात तो यह थी कि विद्याभूषण ने राजा को सर्वप्रथम अपना "सूर्य-दर्पण" काव्य सुनाया। काव्य-श्रवण के उपरान्त राजा ने विद्याभूषण की प्रशंसा करते हुए कहा, "तुम्हारे भीतर महाकवि बनने के लक्षण हैं, क्या तुमने कुछ और काव्यों की रचना भी की है?"

"महाराज, इस समय मेरे पास स्वरचित बारह काव्य हैं। मुझे अपने काव्य अच्छे लगते हैं, इसमें सन्देह नहीं! यह मेरे लिए स्वाभाविक भी है। पर मुझे आप जैसे काव्य-गुण के ज्ञाता और रसज्ञ विद्वान के सम्मुख कविता-पाठ करने के लिए श्रेष्ठ काव्य का चयन करना था। इस कार्य में मेरे गाँव के मुखिया सोमनाथ ने मेरी सहायता की है। मेरे अन्य काव्य "सूर्य-दर्पण" शीर्षक काव्य की समता नहीं कर सकते।" विद्याभूषण अभी कुछ और भी कहना चाहता था कि राजा विक्रमविभूति ने उसे रोककर कहा, "मेरे श्रवण के लिए जिसने इतने सुन्दर काव्य का चयन
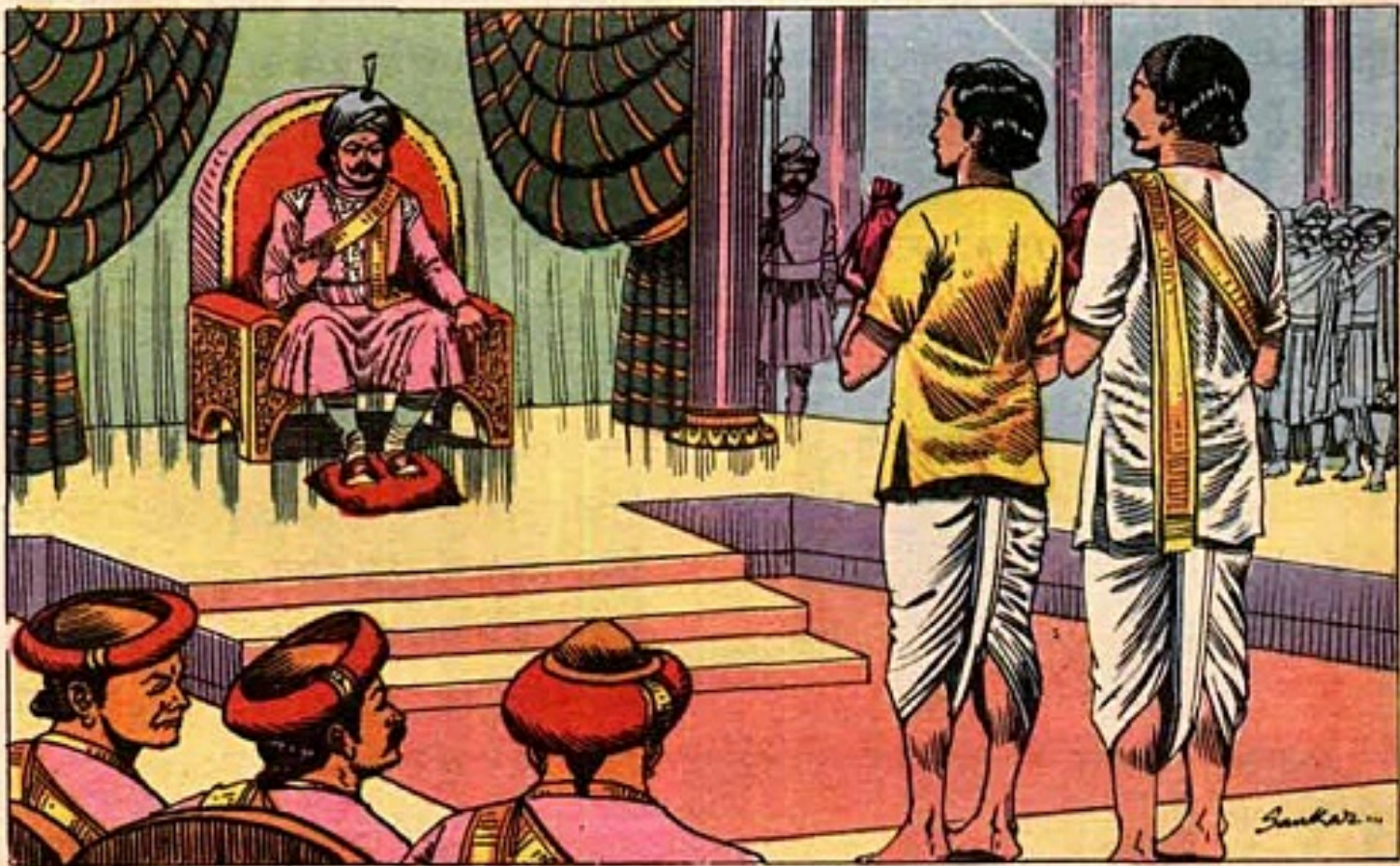
किया, मैं उस व्यक्ति का भी सम्मान करना चाहता हूँ।" यह कहकर राजा ने तत्काल धरमपुर के मुखिया सोमनाथ को बुला लाने का आदेश जारी किया ।

दूसरे दिन राजा विक्रमविभूति ने मुखिया सोमनाथ का भव्य सम्मान किया और कवि विद्याभूषण के साथ हुई काव्य-चर्चा को भी सोमनाथ को सुनाया ।

राजा की प्रशंसा और अन्य सारी बातों से मुखिया सोमनाथ को प्रसन्न होना चाहिए था, पर उसका मुख और भी मलिन हो उठा। उसने राजा से कहा, "महाराज, हमारे गाँव के युवक विद्याभूषण ने आपको जो काव्य "सूर्य-दर्पण" सुनाया है, वह मुझे बिलकुल पसंद नहीं आया है मैंने तो "वसंत-मंजरी" काव्य को पसन्द किया था। यदि आपने उसे सुन लिया होता, तो आप विद्याभूषण की काव्य प्रतिभा से अत्यन्त प्रसन्न हो उठते और मेरे लिए भी मेरा यह सम्मान अधिक हर्षप्रद होता ।"

राजा मुखिया सोमनाथ को अतिथि-गृह में भेजकर विद्याभूषण से कहा ," विद्याभूषण, तुम्हारे गाँव के मुखिया ने "वसंत-मंजरी" काव्य का चयन किया था, तुमने मुझे "सूर्य-दर्पण" काव्य क्यों सुनाया,

"महाराज! काव्य के चयन में मैंने मुखिया सोमनाथ की सहायता ली है। मैंने आपसे यह कहा नहीं था कि मुखिया के पसन्द का काव्य मैं आपको सुना रहा हूँ। मुझे इस बात का ज्ञान है कि मुखिया की अभिरुचि किस शताब्दी की है। मैं यह भी जानता हूँ कि जो काव्य उन्हें घटिया लगेगा वही साहित्यिक अभिरुचि के व्यक्ति को श्रेष्ठ प्रतीत होगा। मेरे सभी काव्य यदि उन्हें श्रेष्ठ लगे होते, तो मैं उन काव्यों को तुच्छ समझता और आपके पास आने का साहस न करता।" विद्याभूषण ने कहा ।

अपने काव्यों के चयन में विद्याभूषण ने गाँव के मुखिया का कितना चतुर उपयोग किया है, यह जानकर राजा के मुँह से हँसी का फुहारा छूट पड़ा। उसी दिन शाम को राजा ने मुखिया सोमनाथ को विदा किया। इसके बाद राजा ने विद्याभूषण को अपने सभाकवि पद पर नियुक्त किया ।
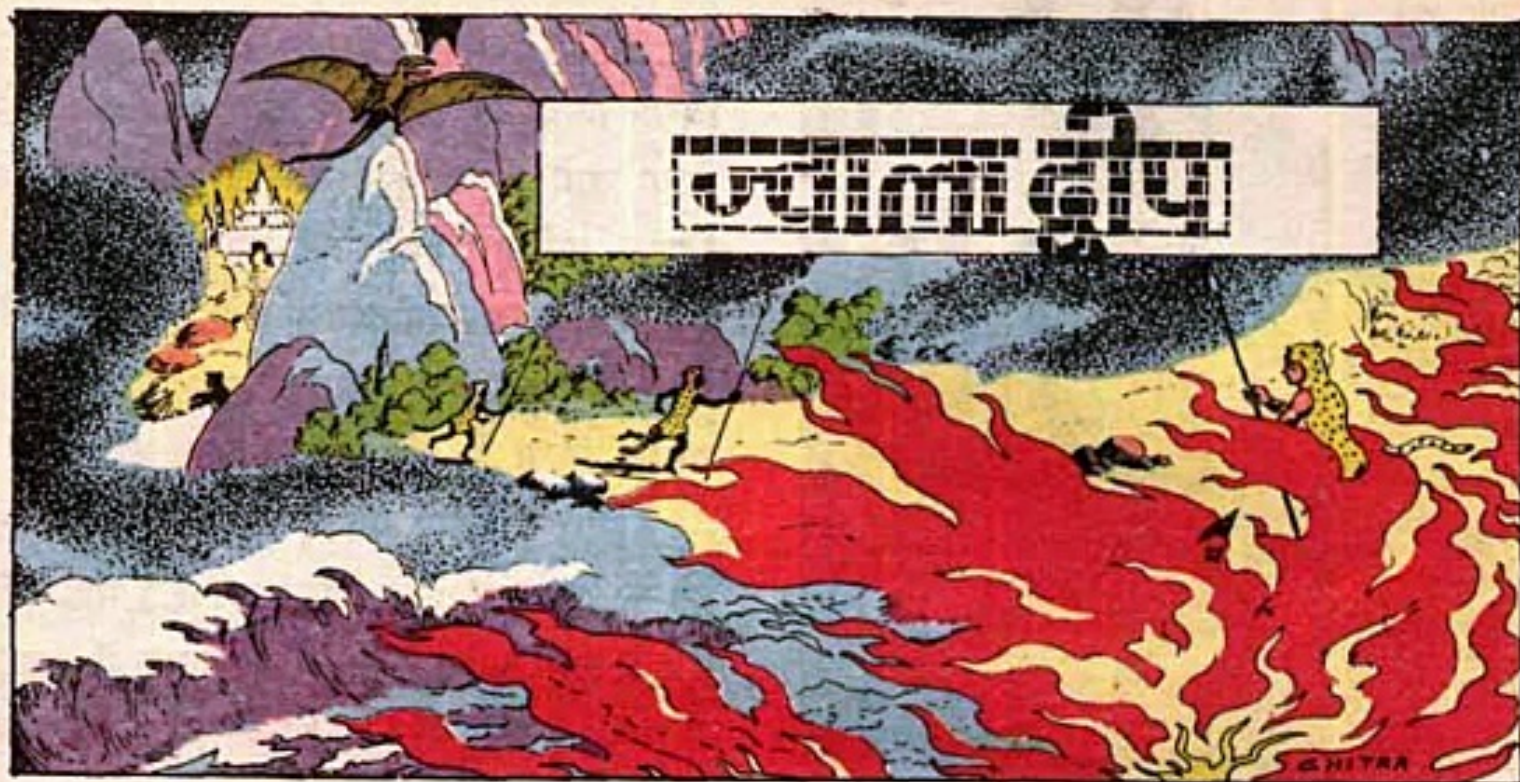
[१७]

[भल्लूकचर्मधारी लोग उग्रदत्त को सुरंग के मार्ग से अपने सरदार कन्ध के पास ले गये। कन्ध ने उग्रदत्त से बताया कि बाघचर्मधारियों के एक नेता एकपाद का संहार करने के लिए उसे राक्षसों की सहायता की आवश्यकता है। उसने उग्रदत्त को यह भी बताया कि एकपाद का वध करना सरल कार्य नहीं है, क्योंकि यदि वह किसी का रक्त देखे या उसका रक्त कोई देखे तो दोनों हालतों में वह दूसरा व्यक्ति तत्काल मर जायेगा। आगे पढ़िये !...]

बाघचर्मधारियों के नेता एकपाद की अपूर्व शक्तियों का समाचार सुनकर उग्रदत्त आपादमस्तक काँप उठा। केवल भय ही नहीं, बल्कि एक असंभव सी स्थिति ने उसे थर्रा दिया था। ज्वालाद्वीप में आने के बाद जब उसे पता लगा था कि यहाँ दो पक्ष हैं जो परस्पर शत्रु हैं और अब वह मित्र पक्ष के कब्ज़े में है, जो बाघचर्मधारियों को नष्ट करने के लिए स्वयं संघर्षशील है, तो उसे बड़ी उम्मीद बंधी थी। पर एकपाद की विचित्र शक्ति के बारे में सुनकर उग्रदत्त काफ़ी हताश हो उठा। वह असमंजस में पड़ गया। एकपाद का अंत किये बिना वह तथा उसके मित्र भी ज्वालाद्वीप से बाहर नहीं जा सकते थे। इसके साथ ही सामन्त राजा सुदर्शन की पुत्री चंद्रलेखा भी इस समय उस दुष्ट के अधीन थी। अब बड़ा विकट सवाल सामने था। रक्त बहाये बिना एकपाद का वध कैसे संभव हो? कौन करे इस असंभव कार्य को?

कन्ध ने एकपाद के बारे में और अधिक बताते हुए कहा, "उसका वध करना अत्यन्त जटिल समस्या है । एक बार मेरे अनुचरों ने एकान्त में उसे बन्दी बना लिया था, पर इससे पहले कि मेरे अनुचर भाले उठाकर उसका संहार करें, उसने कटार से अपने चेहरे पर घाव कर लिया । घाव से बह रहे रक्त को देखते ही मेरे सभी अनुचर तत्क्षण मर गये ।"

"इसका मतलब है कि उसके सामने जाना ख़तरे से ख़ाली नहीं, तो फिर उसका वध कैसे किया जायेगा?" उग्रदत्त ने निराश होकर कहा ।

रुद्र ने बड़ी अर्थभरी दृष्टि से एकपाद के दुर्ग की तरफ़ दृष्टि डाली, फिर कहा, "यदि हम एक बार उस दुर्ग को घेर लें तो फिर इस बात पर विचार किया जा सकता है कि उसका वध कैसे किया जाये । तब कोई न कोई उपाय अवश्य निकल आयेगा । हमारे नेता उग्राक्ष बड़े ही चतुर हैं । वे न केवल शक्तिशाली और बलशाली हैं, पर उन्होंने कई बार बड़ी जटिल समस्याओं का सामना किया है और विजय प्राप्त की है ।"

उग्रदत्त ने अपने मन में सोचा, "शायद रुद्र को मेरे पोषक पिता के जीवन का कोई मोह नहीं है । ये लोग चाहते हैं कि मैं हर हालत में उग्राक्ष से सहायता मांगूँ, फिर जो भी हो । ये अच्छी तरह जानते हैं कि उग्राक्ष मेरा नाम सुनते ही कुछ भी करने के लिए न केवल तैयार हो जायेंगे, बल्कि उसके लिए कोई भी मूल्य देने से पीछे न हटेंगे । इन्हें यह भी विश्वास है कि प्राणों का भय न रखनेवाले शक्तिशाली राक्षसों की सहायता के बिना भयंकर पक्षियों तथा बाघचर्मधारियों से टक्कर नहीं ली जा सकती ।"

उग्रदत्त यों विचार कर ही रहा था कि कन्ध ने उसके समीप जाकर कहा, "उग्रदत्त, तुमने क्या निर्णय लिया है? तुम्हारे पोषक पिता उग्राक्ष के पास सहायता की मांग करते हुए सन्देश भेजा जाये अथवा नहीं?"

"उनके पास किसे भेजा जाये? क्या मैं ही जाऊँ?" उग्रदत्त ने पूछा ।

कन्ध उत्तर दे, इससे पहले ही रुद्र ने आगे बढ़कर कहा, "आप मुझे जाने की अनुमति दीजिए! मैं कपिलपुर जाकर यहाँ के समाचार सुनाकर सहायता ले आऊँगा ।"

उग्रदत्त एवं कन्ध दोनों ने ही उसे अनुमति प्रदान की। इसके बाद कन्ध ने अपने एक अनुचर को बुलाकर उसे आदेश दिया कि रुद्र को भयंकर पक्षी पर बिठाकर उसे कपिलपुर राज्य के जंगलों में उतार दे।

तब चेतक नाम के उस सेवक ने कुछ हताश स्वर में कहा, "नायक, आप तो जानते ही हैं। जब से उग्रदत्त, रुद्र और अरुद्र को बाघचर्मधारियों ने बंदी बनाया है और उन्हें इस द्वीप में लाया गया है, तबसे सारे राक्षस संगठित होकर रात-दिन इन बाघचर्मधारियों और पक्षियों के लिए पहरा दे रहे हैं। हमें भयंकर पक्षी पर देखते ही वे हम पर हमला बोल देंगे और हमारा संदेश सुनने से पहले ही हमें मार डाले।"

उग्रदत्त ने कुछ क्षण सोचकर कहा, "तब तो एक उपाय करना होगा। रुद्र को आकाश से ही किसी ऐसी चीज़ को नीचे गिराना होगा, जिससे उसका परिचय प्रकट हो जाये। उसके बाद ही उसे जंगल में उतरना चाहिए। यह सच है कि रुद्र अरुद्र के साथ मेरे अचानक गायब हो जाने के कारण राक्षसों में अत्यन्त आक्रोश फैला होगा और वे पिता उग्राक्ष की आज्ञा से बाघचर्मधारियों और उनके भयंकर पक्षियों के लिए रात-दिन पहरा दे रहे होंगे। मैं ऐसा करता हूँ। मैं पिता उग्राक्ष के नाम जो पत्र लिख रहा हूँ अगर उसे किसी भारी चीज़ के सहारे पहरा दे रहे राक्षसों के पास गिराकर उन तक पहुँचा दिया जाये तो उन्हें सारी वास्तविक स्थिति का बोध हो जायेगा और रुद्र वहाँ निरापद उतरकर सब कुछ स्पष्ट कर देगा।"

यह उपाय कन्ध एवं रुद्र तथा अन्य सबको काफ़ी कारगर प्रतीत हुआ। इसके बाद कन्ध ने अपने अनुचर एवं रुद्र को आवश्यक निर्देश देते हुए कहा, "यात्रा के लिए आवश्यक तैयारियाँ करो! सुबह ही निकलना होगा।" इसके बाद वह उग्रदत्त को विश्राम के लिए शयनागार दिखाकर चला गया।

उग्राक्ष अपने दुर्ग के सामने के अहाते में एक भारी शिला पर चिन्तामग्न बैठा था। उसने दोनों हाथों से अपना सिर पकड़ रखा था। तभी उसके दो अनुचर दौड़कर उसके पास पहुँचे और हाँफते हुए बोले, "महानायक, बड़ा भारी ख़तरा है।

बहुत गड़बड़ है! हमें तो लगता है उसकी बुद्धि मारी गयी है!"

"कैसा ख़तरा? कैसी गड़बड़? क्या बकवास कर रहे हो? कहीं तुम पागल तो नहीं होगये? किसकी बुद्धि मारी गयी है?" उग्राक्ष ने आँखें लाल-पीली करके अपने सेवकों से पूछा ।

अपने नायक का तमतमाया हुआ चेहरा देखकर वे दोनों सेवक घबरा गये । फिर किसी तरह साहस बटोरकर कंपित स्वर में बोले "महानायक! कोई ज्वालाद्वीपवासी दिन दहाड़े हमारे जंगल के ऊपर उड़ रहा है और भयंकर पक्षी को नीचे उतारने की कोशिश कर रहा है। हमारे साथियों ने उस पर बाण और गदा फेंके, पर कोई परिणाम न निकला । न तो वह भागने की कोशिश ही करता है और न हमारे भय से नीचे उतरने की । उसने गठरी की तरह बंधी कोई चीज़ नीचे गिरायी है और वह स्वयं अभी तक ऊपर उड़ान भर रहा है ।"

"क्या चीज़ गिरायी है? क्या तुम उसे लेकर आये हो?" उग्राक्ष ने कड़े स्वर में पूछा ।

"वह कहीं पेड़ों के बीच गिर गयी है । हमारे साथी उसकी खोज कर रहे हैं ।" राक्षस अनुचरों ने कहा ।

"वह चीज़ ही नहीं खोयी, तुम्हारी बुद्धि भी खोगयी है । चलो, जल्दी चलो! वह जगह मुझे दिखाओ!" उग्राक्ष ने हुंकार भरी और उन सेवकों के साथ चल पड़ा । उग्रदत्त के लापता होजाने के बाद से उग्राक्ष को बात-बात पर गुस्सा आता था ।

उग्राक्ष जंगल में कुछ ही दूर चला था कि उसने देखा, एक ऊँचे टीले के पास एक वृक्ष के नीचे कुछ राक्षसगण और प्रजा के लोग कोलाहल कर रहे हैं । उसी प्रदेश के ऊपर भयंकर पक्षी वृत्ताकार चक्कर खाता हुआ उड़ान भर रहा था । उग्राक्ष को अपनी ओर आता हुआ देखकर भीड़ में से एक राक्षस और दो जन उसके सामने दौड़कर आये । राक्षस के हाथ में एक छोटा-सा रंगीन वस्त्र और लकड़ी में लिपटा एक पत्र था ।

"महानायक, उस भयंकर पक्षी पर तीन आदमी सवार हैं। पर, बड़े आश्चर्य की बात है, वे बाघचर्मधारी नहीं हैं । उनमें से दो व्यक्ति भल्लूकचर्मधारी हैं । कह नहीं सकते कि बाघचर्मधारी ही कहीं हम लोगों को धोखा देने के

लिए छद्मवेश धारण कर आये हो। उन भल्लूकचर्मधारियों ने ही इन चीज़ों को नीचे गिराया है।" यह कहकर राक्षस ने लकड़ी से लिपटा पत्र तथा एक वस्त्र उग्राक्ष के हाथों में दे दिया।

उग्राक्ष ने उन चीजों को गौर से देखा, फिर पत्र खोलकर कहा, "अरे, मूर्खों! क्या तुम्हारी बुद्धि मारी गयी है? तुम मनुष्यों की लिखी भाषा पढ़ने के लिए मुझे यह पत्र दे रहे हो?" इसके बाद उग्राक्ष ने एक़ सभ्य-से दिखते मनुष्य को सम्बोधित कर कहा, "अरे, नरमानव! ज़रा इन लक़ीरों को मुझे पढ़कर सुना देना!" यह कहकर उसने उस पत्र को पास खड़े मनुष्य को पकड़ा दिया।

वह मनुष्य सारा पत्र पढ़कर आनन्द और आश्चर्य से भर गया। उसने खुश होकर कहा, "राक्षसराज! यह पत्र तुम्हारे पोषित पुत्र उग्रदत्त ने लिखा है। वह इस समय ज्वालाद्वीप में है। उस भयंकर पक्षी पर सवार जो तीन मनुष्य हैं, उनमें एक रुद्र है। बाकी दोनों भल्लूकचर्मधारी हैं, जो हमारे मित्र हैं और तुम्हारे लिए कोई संदेश लेकर आये हैं।"

"ओह, मेरा उग्रदत्त ज़िन्दा है। मैं तो जानता ही था कि वह अवश्य जीवित होगा और एक न एक दिन मेरे अरण्य-राज्य में लौट आयेगा। पर वह स्वयं क्यों नहीं आया? अपने बदले रुद्र को क्यों भेजा? क्या वह नहीं जानता मैं उससे मिलने के लिए कितना विकल हो रहा हूँ! पता नहीं, वह कैसा होगा? खैर, रुद्र से ही पूछूँगा। तुम लोग भयंकर पक्षी पर सवार उन लोगों को नीचे उतरने का संकेत दो!" उग्राक्ष ने उतावली दिखाकर कहा।

उग्राक्ष का आदेश पाकर फिर एक़ बार सबमें हलचल मच गयी। राक्षस तथा मानव-प्रजा के लोग पेड़ों और टीलों पर चढ़ गये और लंबी डालों को हिला-हिलाकर भयंकर पक्षी पर सवार लोगों को नीचे उतर आने का इशारा करने लगे। भयंकर पक्षी अधोमुख हो नीचे की तरफ़ उड़ने लगा और उग्राक्ष से कुछ दूर धरती पर उतर गया। पक्षी के ऊपर से रुद्र उछल कर नीचे कूद पड़ा।अपने लोगों को देखकर रुद्र की खुशी का ठिकाना नहीं रहा। वह किलकारी मारता हुआ उग्राक्ष के पास दौड़ा चला आया।

रुद्र को देख उग्राक्ष आनन्द से भर गया। उसने रुद्र को अपने दोनों हाथों में ऊपर उठा लिया और प्यार से झुलाकर उसे नीचे उतारकर पूछा, "उग्रदत्त कुशल से तो है न? वह तुम्हारे साथ क्यों नहीं आया? अरुद्र का क्या हाल है?"
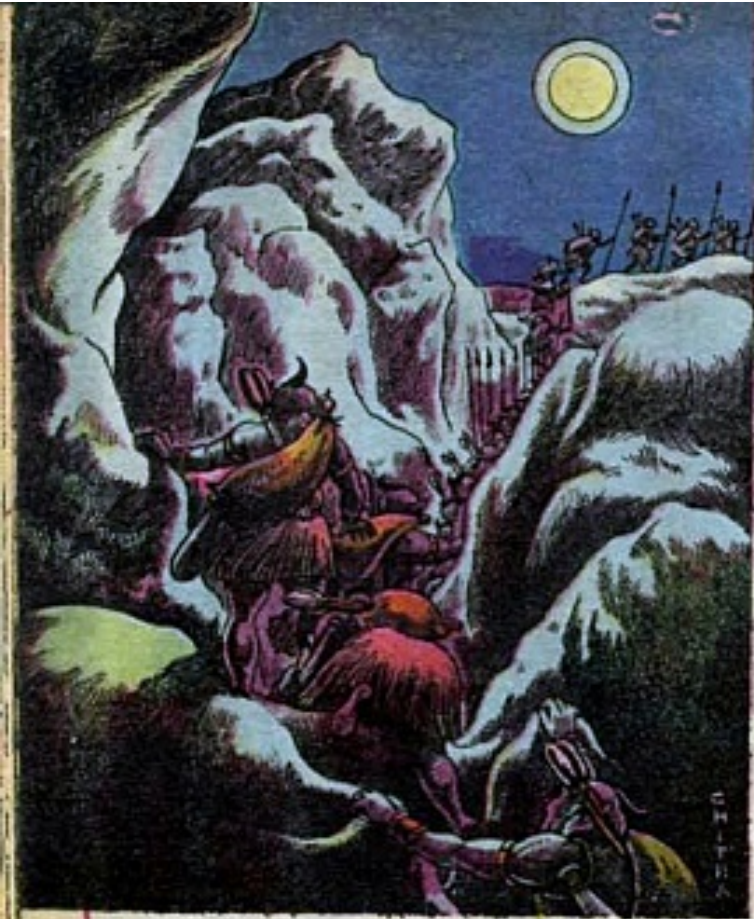
"महानायक! उग्रदत्त कुशल से है। अरुद्र और कपिलपुर के अधीनस्थ राजा सुदर्शन की पुत्री चंद्रलेखा बाघचर्मधारियों के हाथों बंदी होगये हैं। जब तक बाघचर्मधारियों के नेता एकपाद का वध नहीं होजाता, तब तक न तो उग्रदत्त यहाँ आ सकता है और न अरुद्र एवं राजकुमारी चंद्रलेखा को छुड़ाया जा सकता है। इसीलिए भल्लूकचर्मधारियों के नेता कन्ध और आपके पोषित पुत्र उग्रदत्त ने आपसे सहायता माँगी है।" रुद्र ने सब स्पष्ट किया।

"मेरा पुत्र, मेरा उग्रदत्त मेरी सहायता माँग रहा है? यह क्या कह रहे हो? उसके लिए तो मैं चौदह भुवनों को छान सकता हूँ। अपना जीवन मैंने उसी पर तो न्यौछावर कर रखा है। मैं तो उसी की आस लगाये बैठा हूँ। अगर वह मेरी आँख बचाकर कहीं छिपना भी चाहेगा तो छिप नहीं सकता। मेरे बाद मेरे इस अरण्य-राज्य का राजा भी तो वही है।" उग्राक्ष ने उत्तेजित होकर कहा।

उग्राक्ष के थोड़ा शांत होने पर रुद्र ने बताया कि किस तरह ज्वालाद्वीप दो पक्षों में बंटा हुआ है—बाघचर्मधारी और भल्लूकचर्मधारी। उसने कन्ध की सज्जनता और सहृदयता के बारे में भी बताया कि कैसे उसने उसके और उग्रदत्त के प्राणों की रक्षा की। रुद्र ने आगे कहा, "आप लोगों को नावों पर सवार होकर ज्वालाद्वीप चलना होगा। ज्वालाद्वीप पहुँचने में दो दिन और दो रात लगेंगे। आपके मार्गदर्शन के लिए मेरे साथ एक विशेष मार्गदर्शक भल्लूकचर्मधारी भी आया हुआ है।" यह कहकर रुद्र ने उग्राक्ष से एक भल्लूकचर्मधारी का परिचय कराया, जिसका नाम शम्बूक था। अपने दिये हुए कर्त्तव्य को पूरा करने के बाद रुद्र पुनः ज्वालाद्वीप लौट गया। मार्गदर्शक शम्बूक उग्राक्ष के पास रह गया।

उग्राक्ष ने अपनी सेना में से पाँच सौ पराक्रमी योद्धाओं को चुना और उनके साथ ज्वालाद्वीप के लिए रवाना होगया। वे लोग महारण्यों, पहाड़ों तथा नदियों को पार करके एक सप्ताह बाद समुद्र

के किनारे पहुँचे ।

राक्षसों में से बहुत से लोगों ने पहली बार समुद्र देखा था। उस विशाल सागर को देख वे कानाफूसी करने लगे—"इस विशाल जलसागर के बीच ज़मीन कैसे होगी? कहीं पानी के बीच में ज़मीन हो सकती है? ऐसा तो हमने कभी देखा न सुना, ज़रूर इसमें कोई धोखा है। देखना, हमें जल में ही अपने प्राणों की आहुति देनी होगी।"

राक्षसों की कानाफूसी सुनकर उग्राक्ष उबल पड़ा। कड़क कर बोला, "बकवास बंद करो! चलो, काम में लगो! सबसे पहले जंगली वृक्षों को काट डालो। उनके लकड़ों से दस इतनी बड़ी नावें बनाओ कि एक नाव पचास योद्धाओं का बोझ ढो सके। उन पर सवार होकर समुद्र की यात्रा करनी होगी और ज्वालाद्वीप पहुँचना होगा, वरना तुम्हारी आशंका के अनुसार जल में ही प्राण गंवाने होंगे।"

उग्राक्ष की चेतावनी से राक्षसों में एक ओर भय तो दूसरी ओर आत्मविश्वास और साहस की लहर दौड़ गयी। उन लोगों ने महावृक्षों को जड़सहित उखाड़ डाला और जटाओं से उन्हें आपस में बांधकर बड़ी-बड़ी दस नावें तैयार कर लीं।

दो-तीन दिन बीत गये। सुबह की बेला थी। सारी नौकाएं प्रस्थान के लिए तैयार थीं। उग्राक्ष भी अपनी नौका पर सवार होने को था कि कपिलपुर के राजा चित्रसेन के यहाँ से एक दूत सन्देश लेकर आया। दूत के मुँह से उग्राक्ष ने

जान लिया कि राजा चित्रसेन ज्वालाद्वीप में हुई हर घटना से परिचित है। चित्रसेन ने सन्देश दिया था कि वह उग्राक्ष के इस कार्य में अपनी सैनिक सहायता अर्पित करना चाहता है।

दूत नवचेतन ने उग्राक्ष से कहा, "राक्षसनायक! हमारे महाराजा चित्रसेन एवं महारानी यह सुनकर अत्यन्त विकल हो उठे हैं कि उनके पुत्र अमितसेन का बाघचर्मधारियों ने अपहरण कर लिया है। वे यह जानकर भी अत्यन्त दुखी हैं कि उनके सामन्त राजा सुदर्शन की पुत्री चंद्रलेखा का भी अपहरण होगया है। द्रोही नागवर्मा के साथ महाराजा चित्रसेन ने जो युद्ध किये, उनमें राजा सुदर्शन ने बड़ी सहायता पहुँचायी थी। वे महारानी के रिश्तेदार भी हैं। उनका यह विचार

भी है कि युवराज अमितसेन के साथ यदि राजकुमारी चंद्रलेखा का विवाह होजाये तो अति उत्तम हो । पर इस समय तो हमारे महाराज युवराज की सुरक्षा के लिए विशेष रूप से व्याकुल हैं । और इसीलिए वे आपकी सैनिक सहायता करना चाहते हैं ।"

दूत नवचेतन की बातें सुनकर उग्राक्ष क्रोध से काँप उठा । उसने प्रहार के लिए अपनी शिला-गदा उठानी चाही, पर फिर संयत होकर बोला, "वह युवराज अमितसेन नहीं, मेरा पुत्र उग्रदत्त है । अपने राजा और रानी से जाकर कह दो कि मेरे पुत्र के लिए दुखी होने का हक़ उन दोनों को नहीं है । किसी सामन्त या सुदर्शन राजा को मैं नहीं जानता । मैंने कभी उसका नाम भी नहीं सुना । उसकी पुत्री चंद्रलेखा मेरे उग्रदत्त के लिए योग्य वधू है या नहीं, इसका फैसला मुझे करना है । समझे! अब तुम जा सकते हो ।"

दूत नवचेतन ने सोचा कि उग्राक्ष को समझाने का प्रयत्न करना जान पर खेलने जैसा है । वह भाग खड़ा हुआ । इसके बाद उग्राक्ष का आदेश पाकर राक्षसों ने नावों को कुछ दूर तक समुद्र में खींचा, फिर पशुओं के चमड़े से निर्मित पालों को वायु की अनुकूल दिशा में ऊपर उठा दिया । सबसे आगे की नाव में मार्ग दिखाने के लिए आया हुआ भल्लूकचर्मधारी शम्बूक था ।

राक्षसों की नावें पूर्वी दिशा में बढ़ चलीं । एक दिन और एक रात बिना किसी ख़तरे के बीत गये । नावें काफ़ी दूर निकल गयी थीं । अभी तक कोई बाधा सामने नहीं आयी थी । समुद्र और हवा दोनों ही अनुकूल थे । पर आगे जाने पर राक्षसों ने सूर्योदय के समय अचानक देखा कि कुछ दूर पर समुद्र से आग के शोले उठकर आसमान छू रहे हैं । कुछ राक्षस "ज्वालाद्वीप! ज्वालाद्वीप!" कहकर बड़ी ज़ोर से चिल्ला उठे ।

इसके बाद राक्षसों ने देखा कि द्वीप की दिशा से एक छोटी और काली आकृति उनकी ओर बढ़ी चली आ रही है । देखते ही देखते वह आकृति बड़ी होगयी और नावों के ऊपर मंडराने लगी । वह एक भयंकर पक्षी था ।

गुणशेखर

दृढ़व्रती विक्रमार्क पेड़ के पास लौट आये, पेड़ पर से शव उतार कंधे पर डाला और सदा की भाँति मौन हो श्मशान की ओर चलने लगे। तब शव में वास करनेवाले बेताल ने पूछा, "राजन, जनता के सुख-दुखों का ध्यान रखते हुए आपको न्यायपूर्वक राज्य-कार्य करना चाहिए था। पर आप इसके विपरीत इस अर्धरात्रि के समय श्मशान में अपना समय व्यर्थ नष्ट कर रहे हैं। आप जैसे पराक्रमी राजा को यहाँ भटकते देख मेरे मन में यह शंका हो रही है कि आपको किसी दुष्ट व्यक्ति ने इस कार्य में प्रवृत्त कर दिया है। आपको यह समझाने की आवश्यकता नहीं है कि नीच तथा मूर्ख व्यक्तियों की मदद करना कितना ख़तरनाक होता है! आपको सावधान करने के लिए मैं गुणशेखर नाम के एक ऐसे युवक की कहानी सुनाता हूँ जो अत्यन्त मेधावी और दूरदृष्टि-संपन्न था। श्रम को भुलाने के लिए सुनिये!"

बेताल कथा

से परिचित थे। वे अपने पुत्र के बचाव के लिए मंत्री-पुत्र गुणशेखर को समझाया करते—"बेटा, तुम दोनों बचपन के मित्र हो। मैं शौर्यपाल को एक उत्तम राजा बनाने का उत्तरदायित्व तुम्हें सौंप रहा हूँ।"

गुणशेखर एक सच्चा मित्र था। वह समय-समय पर शौर्यपाल को साहस, पराक्रम एवं राजनीति के सम्बन्ध में ज्ञान-परामर्श दिया करता था।

उन्हीं दिनों गांधार देश के राजा के यहाँ से अवन्तीदेश के राजा के लिए एक संदेश आया। उस संदेश में गांधार-नरेश सिंहबल की पुत्री अनन्तलक्ष्मी के विवाह के बारे में लिखा हुआ था। राजकुमारी अनन्तलक्ष्मी का स्वयंवर एक नयी रीति से संपन्न किया जानेवाला था। उस स्वयंवर में कोई भी उत्तम क्षत्रिय वंश का युवक भाग ले सकता था। उसके लिए तीन परीक्षाओं का सारा विवरण गांधार देश की राजधानी गार्गेयपुर में प्राप्त था।

गांधारनरेश की ओर से इस संदेश के साथ अनन्तलक्ष्मी का चित्र भी भेजा गया था। राजा यशपाल अपने पुत्र की दुर्बलता से परिचित थे, इसलिए वे सारा वृत्तान्त सुनकर भी मौन बने रहे। पर शौर्यपाल राजकुमारी अनन्तलक्ष्मी का चित्र देखकर अपना आपा खो बैठा।

राजकुमार शौर्यपाल कुछ देर के पश्चात् अपने मित्र गुणशेखर से मिला और राजकुमारी अनन्तलक्ष्मी के स्वयंवर का समाचार सुनाकर

बेताल कहानी सुनाने लगाः

अवन्तीदेश में राजा यशपाल का शासन था। उनके पुत्र का नाम था शौर्यपाल। शौर्यपाल नाम का ही शौर्यपाल था, पर वास्तव में वह कायर था। बचपन से ही शौर्यपाल में बुद्धिहीनता एवं मूर्खता के लक्षण नज़र आने लगे थे। युवक होने पर भी वह वैसा ही बुद्धिहीन और मूर्ख रहा।

मंत्री राजशेखर ने अवन्तीदेश की बहुत सेवा की थी। उनके पुत्र गुणशेखर के साथ शौर्यपाल की मैत्री थी। दोनों साथ ही साथ बड़े हुए थे, पर दोनों में ज़मीन-आसमान का अंतर था। गुणशेखर रूप, गुण और बुद्धिमत्ता में अद्वितीय था।

राजा यशपाल अपने पुत्र शौर्यपाल की मूर्खता

कहा, "मित्र, मेरी मनोकामना पूरी करने में तुम मेरी मदद करो! मैं अनन्तलक्ष्मी के साथ विवाह करना चाहता हूँ। हम दोनों को गार्गेयपुर के लिए रवाना हो जाना चाहिए ।"

गुणशेखर ने कहा, "राजकुमार, हम नहीं जानते कि स्वयंवर के समय कैसी परीक्षाओं का आयोजन किया गया है। बिना विचारे जायेंगे तो हमारा अपमान निश्चित है ।"

"गुणशेखर, इसीलिए तो मैं तुमसे अपने साथ चलने के लिए कह रहा हूँ। हम वहाँ जाकर उन परिक्षाओं का विवरण जानेंगे । इसके बाद आवश्यकतानुसार तुम मेरी मदद करना । चलो, हमें विलम्ब नहीं करना चाहिए ।" शौर्यपाल ने आतुर होकर कहा ।

"पर इसके लिए महाराज की अनुमति आवश्यक है ।" गुणशेखर ने कहा ।

"गुणशेखर, पिताजी इस स्वयंवर में भाग लेने के लिए मुझे कभी अनुमति नहीं देंगे।" शौर्यपाल ने कहा ।

गुणशेखर को शौर्यपाल की बात माननी पड़ी। दोनों तैयार होकर गार्गेयपुर के लिए निकल पड़े। वहाँ पहुँचकर उन्होंने स्वयंवर के सम्बन्ध में सारा विवरण प्राप्त किया ।

परीक्षाओं के बारे में पता लगा कि एक विशेष भवन में वे परीक्षाएँ ली जायेंगी। तीन कक्षों में तीन परीक्षाओं का आयोजन किया गया है । प्रथम कक्ष साँपों से भरा होगा और प्रत्याशी को उन सर्पों के बीच स्थान बनाकर पैर रखते हुए आगे बढ़ना होगा ।
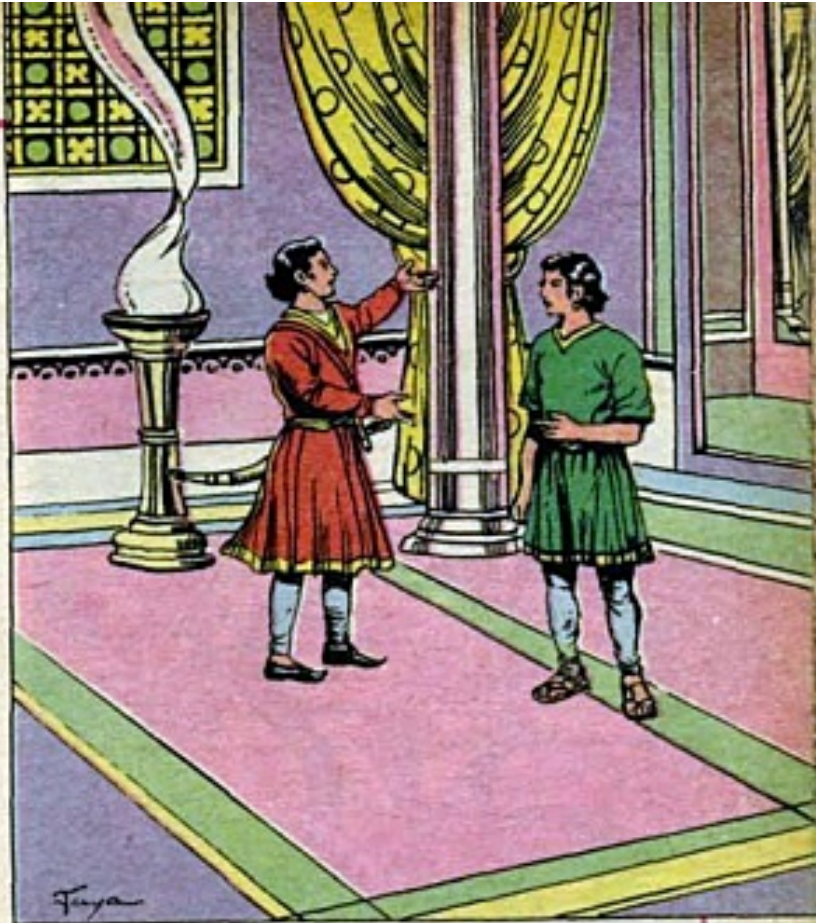
प्रथम कक्ष को पार करनेके बाद दूसरे कक्ष के प्रवेश-द्वार पर प्रतिहारी के स्थान पर राजकुमारी की एक सखी खड़ी होगी। वह प्रश्न करेगी, "क्षमा कीजिए! क्या आप बताने की कृपा करेंगे कि विष-सर्पों ने आपके साथ क्या किया?"

इस प्रश्न का उत्तर सुनने के बाद ही दूसरे कक्ष में प्रवेश मिलेगा ।

दूसरे कक्ष में दो व्यक्ति ब्राह्मण-वेशभूषा में बैठे होंगे। उनमें एक ब्राह्मण और दूसरा अन्य वर्ण का मनुष्य होगा। प्रत्याशी को उन दोनों का वर्ण बताना होगा। इसका सही उत्तर देने पर ही तीसरे कक्ष में प्रवेश करने की अनुमति मिलेगी।

तीसरे कक्ष में दीवार पर एक चित्र टंगा होगा।

वह चित्र राजकुमारी अनन्तलक्ष्मी की ही कृति है। उस चित्र में एक अश्व आधा सफ़ेद तथा आधा श्यामवर्ण में चित्रित है। उस अश्व पर एक सुन्दर पुरुष सवार है, जिसे एक घूमनेवाले चक्र पर बड़ी कुशलतापूर्वक घोड़े को हाँकते हुए प्रदर्शित किया गया है ।

वहाँ पहुँचकर प्रत्याशी को उस चित्र की व्याख्या करनी होगी । अगर वह व्याख्या सही होगी तो राजसेवक उस प्रत्याशी को राजकुमारी अनन्तलक्ष्मी के पास ले जायेगा ।

इन सारी परीक्षाओं के विवरण पर थोड़ी देर विचार करने के बाद गुणशेखर ने शौर्यपाल को तीनों कक्षों की परीक्षाओं के बारे में विस्तार से समझाकर और उनके हल बताकर उसे स्वयंवर के लिए प्रस्तुत परीक्षा-भवन में भेज दिया ।

शौर्यपाल सर्पों और परीक्षाओं के नाम से ही काँप रहा था । उसने डरते-काँपते हुए किसी तरह सर्पों वाला कक्ष पार किया और दूसरे कक्ष के द्वार पर पहुँचा ।

द्वार पर खड़ी राजकुमारी की सखी मदनिका ने पूछा, "क्षमा कीजिए! विष-सर्पों ने आपकी कोई हानि तो नहीं की?"

शौर्यपाल ने अभिमानपूर्वक जवाब दिया, "वे सर्पाकृतियाँ मेरा क्या बिगाड़ सकती हैं?"

तब मदनिका ने झुककर राजकुमार को प्रणाम किया और दूसरे कक्ष में प्रवेश करने के लिए उसे मार्ग दिया । उस कक्ष में दो ब्राह्मण वेशधारी पुरुष कुशासनों पर बैठे जपमालाएँ फेर रहे थे ।

शौर्यपाल ने उन दोनों की ओर तीक्ष्ण दृष्टि डालकर कहा, "चाहे परीक्षा के लिए ही सही, पर यह ब्राह्मण जो राजकुमारी से प्राप्त होनेवाले धन के लोभ में पड़कर अन्य वर्ण के व्यक्ति के साथ समान आसन पर बैठा जप कर रहा है, यदि यह मेरा देशवासी होता, तो मैं यहीं पर इसका सिर काट देता ।"

राजकुमार शौर्यपाल के इन धृष्ट वचनों को सुनकर उनमें से एक के चेहरे पर आवेश झलक उठा । शौर्यपाल ने वहाँ खड़े राजसेवक को उस व्यक्ति की ओर संकेत करके बताया, "यही सच्चा ब्राह्मण है ।"

राजसेवक ने शौर्यपाल को झुककर प्रणाम किया और उसे तीसरे कक्ष में प्रवेश करने का

मार्ग दिखाया ।

शौर्यपाल ने तीसरे कक्ष में प्रवेश किया और वहाँ दीवार पर टंगे राजकुमारी द्वारा चित्रित चित्र की ओर कुछ देर ध्यानपूर्वक देखने का अभिनय कर कहा, "यह चक्र कालचक्र है । सफ़ेद और काला रंग सुख और दुख का सूचक है । जिस धीरोदात्त पुरुष ने सुख और दुख को समान रूप से जान लिया है और सुख-दुखमय जीवन के अश्व पर जो पूरी क्षमता के साथ सवार है तथा उसकी बागडोर को अपने हाथ में रख उसे पूरी तरह नियंत्रित रख सकता है तथा काल-चक्र पर शक्ति के साथ आगे बढ़ सकता है, उसी श्रेष्ठ पुरुष को इस चित्र में चित्रित किया गया है और राजकुमारी उसी के साथ विवाह करना चाहती हैं। यही इस चित्र का आशय है ।"

यह उत्तर सुनकर वहाँ पर उपस्थित विशिष्ट राजसेवक ने शौर्यपाल को प्रणाम किया और कहा, "आप इस पार्श्ववर्ती कक्ष में प्रवेश कीजिए!"

सर्पों वाले कक्ष में प्रवेश करते समय शौर्यपाल की भयभीत मुद्रा को राजकुमारी के चरों ने ताड़ लिया था । यह बात उन्होंने राजकुमारी तक पहुँचा भी दी थी । अब वे ही चर राजकुमारी को शौर्यपाल की विजय का समाचार दे रहे थे —राजकुमारी को बड़ा आश्चर्य हुआ । राजकुमारी अनन्तलक्ष्मी अत्यन्त मेधावी, बुध्दिमती एवं सूक्ष्मदृष्टि-संपन्न थी, इसलिए उसके मन में यह शंका हुई कि शौर्यपाल की विजय के पीछे अवश्य कोई रहस्य होना चाहिए ।

राजकुमार शौर्यपाल विजय-गर्व से उन्नत मस्तक किये राजकुमारी अनन्तलक्ष्मी के कक्ष में पहुँचा ।

राजकुमारी ने कहा, "महाराजकुमार! मैं आपकी विजय का अभिनंदन करती हूँ । किंतु, इन तीनों परीक्षाओं में उत्तीर्ण व्यक्ति के लिए एक और परीक्षा अभी बाकी है ।"

राजकुमार शौर्यपाल अपना धीरज खो बैठा और क्रुध्द होकर बोला, "फिर एक और परीक्षा?"

राजकुमारी अनन्तलक्ष्मी ने विनयपूर्वक कहा, "राजकुमार! आप क्रुध्द न हों! जब तक यह प्रमाणित नहीं होगा कि आपने अपनी स्वयं की

बुध्दि से प्रथम तीन परीक्षाओं में विजय प्राप्त की है, तब एक मेरे कुलगुरु हमारे विवाह की स्वीकृति नहीं देंगे ।''

''उस कुलगुरु का नाम क्या है? उसके पास प्रमाणित करने का आधार क्या है?'' शौर्यपाल ने दांत किटकिटाते हुए कहा ।

अनन्तलक्ष्मी राजकुमार शौर्यपाल की इस अभद्रता पर खिन्न होकर बोली,'' हमारे राजगुरु अपनी मंत्र-शक्ति से आपकी सत्यता की जाँच करेंगे ।आपने यदि इन परीक्षाओं में स्वबुध्दि से विजय प्राप्त नहीं की होगी तो आप न केवल कुरूपता को प्राप्त होंगे, बल्कि राजदंड के भागी भी होंगे ।''

शौर्यपाल ने कटु होकर कहा, ''यह तो मेरा अपमान करना है । मैं अपने देश लौटकर अपनी सेना के साथ गांधार देश पर आक्रमण करूँगा और तुम्हारे पिता को पराजित कर तुम्हारे साथ विवाह करूँगा ।''

अनन्तलक्ष्मी के मुख पर मंदहास छागया । उसने कहा, ''राजकुमार शौर्यपाल! गांधार देश की राजकुमारी के साथ ऐसे हीन वचन बोलना आपको शोभा नहीं देता । आप सच बताइये, आपको इन परीक्षाओं में विजयी बनानेवाला व्यक्ति आपका मंत्री-पुत्र गुणशेखर है न?''

शौर्यपाल चकित हो जड़वत खड़ा रह गया ।

''अब आप जाइये, राजकुमार! और अपने मित्र गुणशेखर को यहाँ भेज दीजिए!'' अनन्तलक्ष्मी ने कहा ।

शौर्यपाल नतमस्तक हो वहाँ से चला गया । उसने गुणशेखर से मिलकर सारा हाल सुनाया ।

गुणशेखर आगामी संकट को समझ गया और शौर्यपाल से बोला, ''युवराज! आप तुरन्त अवन्ती देश के लिए प्रस्थान कीजिए, मैं पीछे आकर आपसे मिलता हूँ ।'' यह कहकर गुणशेखर राजकुमारी अनन्तलक्ष्मी के पास पहुँचा।

गुणशेखर की मेधा से तो राजकुमारी परिचित ही थी, पर उसी के अनुरूप उसके रूप को देखकर वह विमुग्ध रह गयी ।

इसके बाद उसने गुणशेखर को एक आसन पर बैठने का अनुरोध किया । मंत्री-पुत्र के सुखासीन होने पर राजकुमारी ने निवेदन किया, ''मैंने जो तीन परीक्षाएं लीं, उनमें प्रत्यक्षरूप से

भाग लिये बिना भी आप विजयी हुए हैं । मैं आपसे प्रार्थना करती हूँ कि आप विजयलक्ष्मी के साथ मुझे भी ग्रहण कीजिए!"

गुणशेखर ने मुस्कराकर कहा, "जिस व्यक्ति ने स्वयंवर में आपको प्राप्त करने की इच्छा से प्रत्यक्ष रूप में परीक्षाओं में भाग लिया है, उसे ही प्रार्थी अथवा अभ्यर्थी माना जाना चाहिए । प्रश्नों का इत्तर जाननेवाला हर व्यक्ति विजेता होने की योग्यता भले ही रखता हो, पर उसे विजेता नहीं माना जासकता ।"

गुणशेखर का उत्तर सुनकर अनन्तलक्ष्मी एक रहस्यमयी हँसी हँस कर वहाँ से चली गयी । राजकुमारी की हँसी के मर्म को समझने की कोशिश करता हुआ गुणशेखर वहाँ से चल पड़ा और मार्ग में शौर्यपाल से जा मिला ।

शौर्यपाल और गुणशेखर जब राजधानी में पहुँचे, तब राजा यशपाल ने उनके मुख से सारी बातें सुनीं और कुछ देर मौन रहकर गुणशेखर से बोला, "बेटा गुणशेखर! कल हम दोनों बन में शिकार खेलने के लिए जायेंगे, तुम तैयारी कर लेना ।"

दूसरे दिन सुबह राजा यशपाल और गुणशेखर शिकार खेलने के लिए बन में पहुँचे । एक स्थान पर अवसर देखकर यशपाल ने अचानक गुणशेखर पर तलवार से आक्रमण करना चाहा ।

गुणशेखर ने झट पलटकर राजा का हाथ पकड़ लिया, मानो पहले ही वह इस घटना की

कल्पना कर चुका हो । इसके पश्चात् उसने राजा से कहा, "आपके पुत्र की मूर्खता के प्रकट होने के पीछे गांधार देश की राजकुमारी की तीक्ष्ण बुध्दि ही कारण है, मेरी स्वार्थपरता नहीं ।" यह कहकर उसने राजा को घोड़े के ऊपर से नीचे धकेल दिया और तेज़ी से अपना घोड़ा दौड़ाकर चला गया ।

इसके बाद गुणशेखर गांधारदेश गया और राजकुमारी अनन्तलक्ष्मी से मिलकर उसके साथ विवाह की स्वीकृति दी ।

अनन्तलक्ष्मी और गुणशेखर का विवाह राजकीय वैभव के साथ संपन्न हुआ । एक सप्ताह बाद गुणशेखर ने गांधार देश की सेना के साथ अवन्तीदेश पर आक्रमण कर दिया । उसने बड़ी

आसानी से राजा यशपाल को पराजित कर दिया और अवन्तीदेश पर अधिकार कर लिया।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा, "राजन, अब आप बताइये, क्या पूरी निष्ठा से राजपरिवार की सेवा करनेवाला गुणशेखर विश्वासघाती नहीं है? उसने राजा और राजकुमार के साथ द्रोह करके न केवल गांधार नरेश की पुत्री अनन्तलक्ष्मी के साथ विवाह किया, बल्कि अवन्ती देश पर आक्रमण करके उस पर भी अपना अधिकार जमा लिया। इसके अलावा, यह भी बताइये कि गुणशेखर ने जब अनन्तलक्ष्मी के साथ विवाह करने से अस्वीकार किया, तब वह रहस्यमयी हँसी क्यों हँसी? आप इस सन्देह का समाधान जानकर भी न करेंगे तो आपका सिर फूटकर टुकड़े-टुकड़े हो जायेगा।"

तब विक्रमार्क ने कहा, "केवल राजकुमार शौर्यपाल ही नहीं, राजा यशपाल भी अत्यन्त मूर्ख है। यशपाल की मूर्खता की पराकाष्ठा तो तभी प्रकट हो जाती है, जब वह गुणशेखर जैसे शुभभावी युवक पर आक्रमण करता है। राजा यशपाल यह भी नहीं सोचता कि गुणशेखर चाहता तो राजकुमारी से विवाह कर सकता था, पर उसने एक सच्चा मित्र होने के कारण ऐसा नहीं किया। वास्तव में गुणशेखर अपने मित्र राजकुमार शौर्यपाल की सहायता करना चाहता था। उसके मन में राजकुमारी अनन्त लक्ष्मी के साथ विवाह करने की कामना बिलकुल न थी, पर राजा यशपाल उस को खतम करना चाहता था। उसकी ईर्ष्या इतनी अधिक बढ़ती है कि वह उसकी हत्या करने का षडयंत्र करता है। इन्हीं सब कारणों से गुणशेखर की सारी राजभक्ति लुप्त होजाती है और उसका क्षात्र तेज जाग उठता है। जहाँ तक राजकुमारी अनन्तलक्ष्मी की रहस्यमयी हँसी का प्रश्न है—गुणशेखर के द्वारा विवाह-प्रस्ताव को अस्वीकार करने के बाद वह सहज कल्पना कर लेती है कि शौर्यपाल का पिता भी अगर मूर्ख हुआ तो भविष्य में क्या होगा। उसकी हँसी गुणशेखर के लिए मार्गदर्शन का काम करती है।"

राजा के इसप्रकार मौन होते ही बेताल शव के साथ अदृश्य होकर पुनः पेड़ पर जा बैठा।

३ आकर्षक भागों में !

प्रतियोगिता १	प्रतियोगिता २	प्रतियोगिता ३
भारत के महान सम्राट	भारत की महान रानियाँ	भारत के महान दम्पति

१,३०,००० रु० से अधिक मूल्य के पुरस्कार जीतिये !

११ भाषाओं में से हर भाषा में हर प्रतियोगिता के लिए बड़े-बड़े पुरस्कार

११ प्रथम पुरस्कार : २००० रु० की छात्रवृत्ति
११ द्वितीय पुरस्कार : १००० रु० की छात्रवृत्ति
११ तृतीय पुरस्कार : ५०० रु० की छात्रवृत्ति

साथ में बम्पर पुरस्कार

पहला बम्पर : १०००० रु० की छात्रवृत्ति *
दूसरा बम्पर : ५००० रु० की छात्रवृत्ति *
तीसरा बम्पर : २५०० रु० की छात्रवृत्ति *

* ५ वर्ष की अवधि में ५ समान किश्तों में

२२० सांत्वना पुरस्कार—एक वर्ष के लिए निःशुल्क चन्दामामा

कैसे भाग लें

अपनी इतिहास की पुस्तकें और चन्दमामा के पुराने अंक निकालिये और सारे परिवार को एकत्रित कर शुरू कीजिए! साथ में छपे चित्र भारत के इतिहास और पुराणों की प्रसिद्ध रानियों के चित्र हैं। उन्हें पहचानने के लिए चित्रों में सुरागों को तलाश कीजिए और तब खाने में उचित अंक को लिख भर दीजिए।
आगे, छह प्रदर्शित रानियों में से किसी एक को चुनिये, रिक्त स्थान को भरकर अगले पन्ने में वाक्य को पूरा कीजिए "मैं रानी ...... का सबसे अधिक प्रशंसक हूं क्योंकि ...... स्वरचित १५ शब्दों से अधिक का उपयोग मत कीजिए।
अपने उत्तर को सचमुच रोचक बनाइये—याद रखिए श्रेष्ठतम जवाबों को ही पुरस्कार मिलेगा।
अपना नाम, पता और आयु भरिये, अपना पन्ना काटिये और अपनी प्रविष्टि हमें डाक से भेज दीजिए।
और जब आप परिणामों की प्रतीक्षा कर रहे होंगे, आपको चन्दमामा के आगामी अंक में प्रतियोगिता ३ के बारे में जानने को मिलेगा।

प्रतियोगिता के नियम

१. यह प्रतियोगिता १६ वर्ष की आयु तक के सभी बालकों के लिए है। एक बालक कितनी भी प्रविष्टियाँ भेज सकता है, किंतु वह चन्दमामा में मुद्रित प्रवेश-पत्र पर ही होनी चाहिए।

२. कोई भी बालक तीनों प्रतियोगिताओं (भारत के महान सम्राट, भारत की महान रानियाँ, भारत के महान दम्पति) में से एक या सभी प्रतियोगिताओं में भाग ले सकता है और पुरस्कार जीत सकता है। वह बम्पर पुरस्कार को भी आजमा सकता है।

३. प्रविष्टियाँ सुपाठ्य रूप से भरी जानी चाहिएं और वे ११ भाषाओं में से किसी भी भाषा में हो सकती हैं जिनमें चन्दमामा प्रकाशित होता है।

४. प्रतियोगिता २ के लिए प्रविष्टियाँ ३० नवम्बर १९८७ से पहले हमारे पास पहुँच जानी चाहिए।

५. प्रविष्टियों के विलम्ब के लिए, उनके खोने और नष्ट होजाने के लिए प्रबन्धक उत्तरदायी नहीं होंगे।

६. प्रविष्टियाँ साधारण डाक से ही भेजी जानी चाहिएं।

७. प्रतियोगिता चन्दमामा प्रकाशन, हिन्दुस्तान थॉमसन एसोसिएट में सेवारत और उनके परिवार के सदस्यों के अलावा सभी भारतीय नागरिकों के लिए खुली है।

८. प्रविष्टियों का निर्णय एक स्वतंत्र निर्णायक समिति के द्वारा होगा, जिसका निर्णय अंतिम माना जायेगा। किसी भी पत्राचार पर विचार नहीं किया जायेगा।

९. चन्दमामा में विजेताओं की घोषणा होगी और उन्हें व्यक्तिगत रूप से भी डाक द्वारा सूचना दी जायेगी।

आवश्यक : बम्पर पुरस्कार विभाग

अपनी प्रविष्टि भेजने से पहले अपने प्रवेश-पत्र से 'चन्दमामा प्रतियोगिता २' अंकित लेबल को सावधानी से काटकर सुरक्षित रखिये। प्रतियोगिता १ और ३ के साथ भी ऐसा ही कीजिए। ये तीनों लेबल बम्पर विभाग प्रवेश-पत्र (दिसम्बर अंक में प्राप्य) पर चिपकाने होंगे। बम्पर पुरस्कार के लिए इन तीनों लेबल से युक्त प्रविष्टियों पर ही विचार किया जायेगा।

चन्दामामा की यह प्रति सुरक्षित रखिये। बम्पर विभाग के प्रश्न चन्दामामा के सितम्बर, अक्तूबर और नवम्बर अंकों पर आधारित होंगे।

नोट : प्रतियोगिता १ में भाग न लेने पर भी आप प्रतियोगिता २ में भाग ले सकते हैं। याद रखिए सितम्बर अंक की प्रतियोगिता १ में भाग लेने के लिए अब भी विलम्ब नहीं हुआ है (अन्तिम तिथि: अक्तूबर ३१)

प्रतियोगिता २

(प्रवेश पत्र)

जैसा कि उदाहरण में दिखाया गया है, इन छह रानियों की तस्वीरों को उनके सही नामों के साथ मिलाकर उचित अंक भर दीजिए ।

मुमताज महल	१	पद्मिनी	४	कुन्ती	७
नूरजहाँ	२	झांसी रानी	५	रज़िया सुलतान	८
सीता	३	कित्तूर चेन्नम्मा	६	गांधारी	९

बम्पर पुरस्कार के लिए यह लेबल सुरक्षित रखिये

जब आप बम्पर पुरस्कार में (दिसम्बर अंक में) भाग लें, आपको इसे बम्पर विभाग के प्रवेश-पत्र पर चिपकाना होगा ।

चन्दामामा
प्रतियोगित
२

(प्रवेश पत्र)

अब ऊपर दर्शायी गयी तस्वीरों में रानियों के नामों से किसी एक को चुनिये, और 'क्योंकि' शब्द के बाद १५ अतिरिक्त शब्दों से अधिक का प्रयोग न कर इस वाक्य को पूरा कीजिए....

मैं सबसे अधिक रानी .... का प्रशंसक हूँ क्योंकि ....

....

....

....

....

आपका नाम : ....

आयु : .... पता : ....

....

इस पत्र को काटिये, चन्दामामा प्रतियोगिता २ में अंकित कूपन को अपने पास सुरक्षित रख लीजिए और अपनी प्रविष्टि को तुरन्त इस पते पर डाक से रवाना कर दीजिए:

चन्दामामा प्रतियोगिता २
चन्दामामा प्रकाशन
188 आर्काट रोड
मद्रास 600 026

प्रतियोगिता २ की अन्तिम तिथि : नवम्बर ३०, १९८७

बम्पर पुरस्कार के लिए यह लेबल सुरक्षित रखिये

हम्पी

बंगलौर से ५०० कि० मी० की दूरी पर तुंगभद्रा नदी के किनारे हम्पी नगर बसा हुआ है। इसका निर्माण चौदहवीं शताब्दी में हुआ था। हम्पी नगरी ही कालान्तर में विजयनगर साम्राज्य की राजधानी के रूप में विख्यात हुई। इसके पीछे यह कथा है।
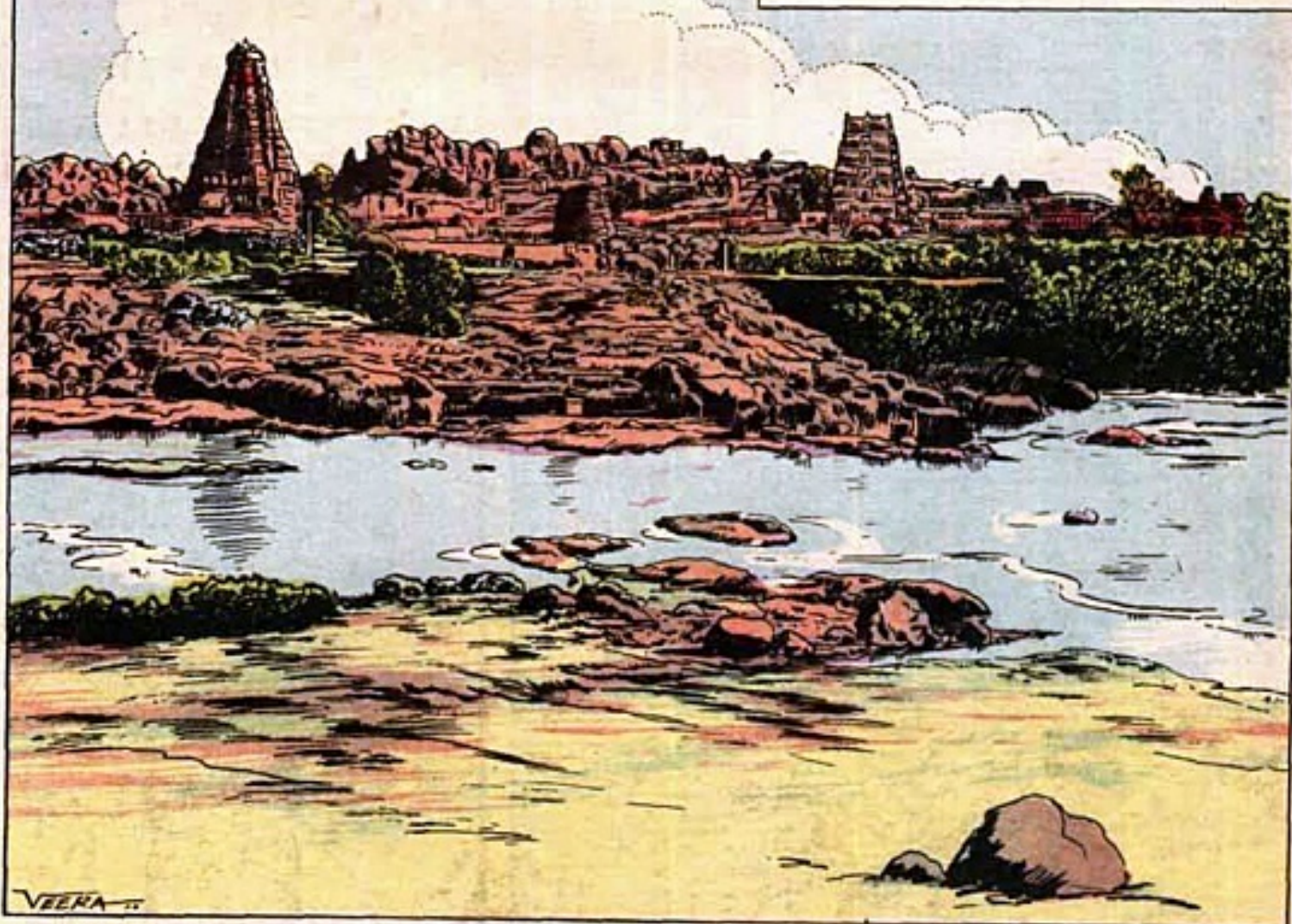
हरिहरराय नाम का एक राजकुमार विद्यारण्य स्वामी के दर्शन करने गया। उसने बताया, "स्वामी, जब मैं समीप के बन में शिकार खेल रहा था, तब मैंने एक स्थान पर देखा कि खरगोश शिकारी कुत्तों का पीछा कर रहे थे।" तब विद्यारण्य स्वामी ने हरिहरराय को उसी प्रदेश में राजधानी नगर के निर्माण का मार्गदर्शन दिया।

इसके पश्चात् विद्यारण्य स्वामी ध्यानमग्न होगये। नगर निर्माण के लिए आवश्यक धन की पूर्ति के लिए उन्होंने भुवनेश्वरी देवी की प्रार्थना की। हरिहरराय और उसके भाई बुक्कराय को स्वामी विद्यारण्य की प्रार्थना के फलस्वरूप भुवनेश्वरी देवी की कृपा प्राप्त हुई। एक रात दोनों भाईयों के समक्ष स्वर्ण की वर्षा हुई।
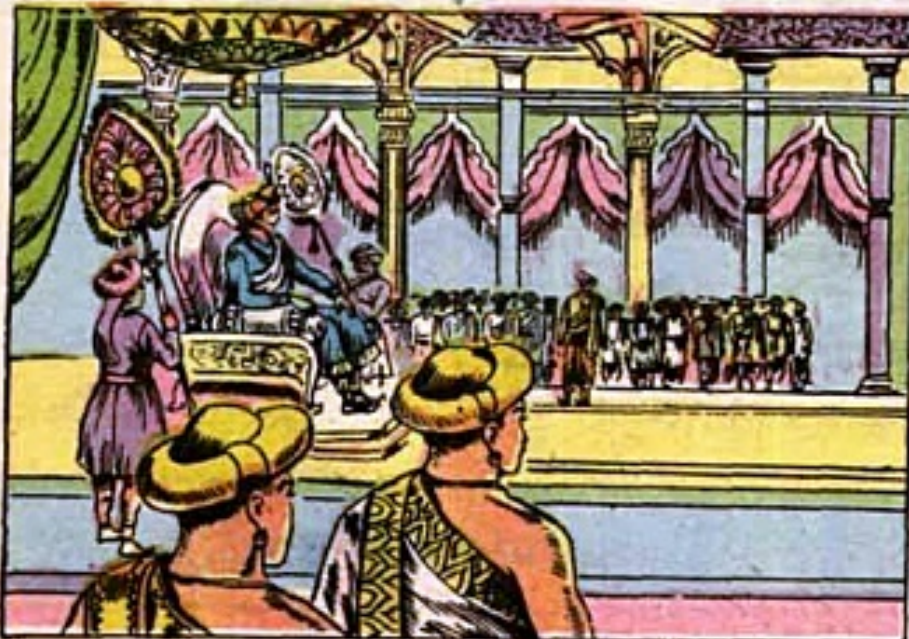
सर्वप्रथम हरिहरराय तथा उसके बाद बुक्कराय ने उस नगर पर शासन किया। सुविख्यात व्याकरण-आचार्य सायण तथा उनके भाई माधवाचार्य इन्हीं दोनों भाईयों के राज्य में मंत्री-पद पर सुशोभित हुए।

विजयनगर साम्राज्य पर शासन करनेवाले चार वंशों में श्रीकृष्णदेवराय का नाम विश्वविख्यात है। १४०७ से १४२७ तक कृष्णदेवराय ने राज्य किया। वे एक कुशल प्रशासक, साहित्यक के प्रवर्धक, कलाप्रेमी एवं उदात्त राजा के रूप में प्रसिध्द हुए। उन्होंने अनेक अद्भुत भवन एवं मंदिर बनवाये थे।

अपने पूर्वजों पर प्रायः आक्रमण करनेवाले बीजापुर और बीदर के सुलतानों की सेनाओं का कृष्णदेव राय ने सर्वनाश किया। उनके शासन काल में शत्रु-भय समाप्त होगया और सुविशाल विजयनगर साम्राज्य शांति एवं सुख का आगार बना रहा।

कृष्णदेव राय के बाद बीजापुर, गोलकोंडा, अहमदनगर और बीदर की सेनाओं ने संयुक्त होकर विजयनगर राज्य पर आक्रमण किया। तालिकोट युध्द के उपरान्त १४३४ में सुसंपन्न सुन्दर हम्पी नगर शत्रुसेना के आक्रमण का शिकार होगया। उस समय सभी महल धराशायी होगये।
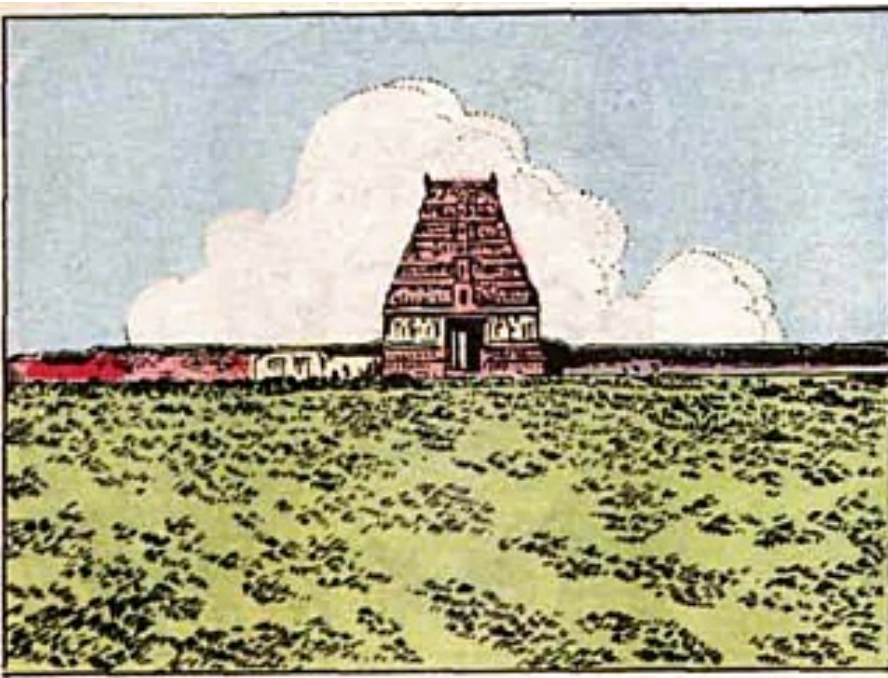
हम्पी के सभी मंदिरों में सबसे बड़ा और सब से विशाल मंडप से शोभायमान मंदिर पट्टाभिराम मंदिर है । अच्युतदेव राय द्वारा निर्मित यह मंदिर इस समय खंडहरों के बीच विद्यमान है ।

बालकृष्ण के विट्ठल मंदिर के प्रांगण में स्थित यह शिलारथ यहाँ की शिल्पकला का एक उत्कृष्ट उदाहरण है ।
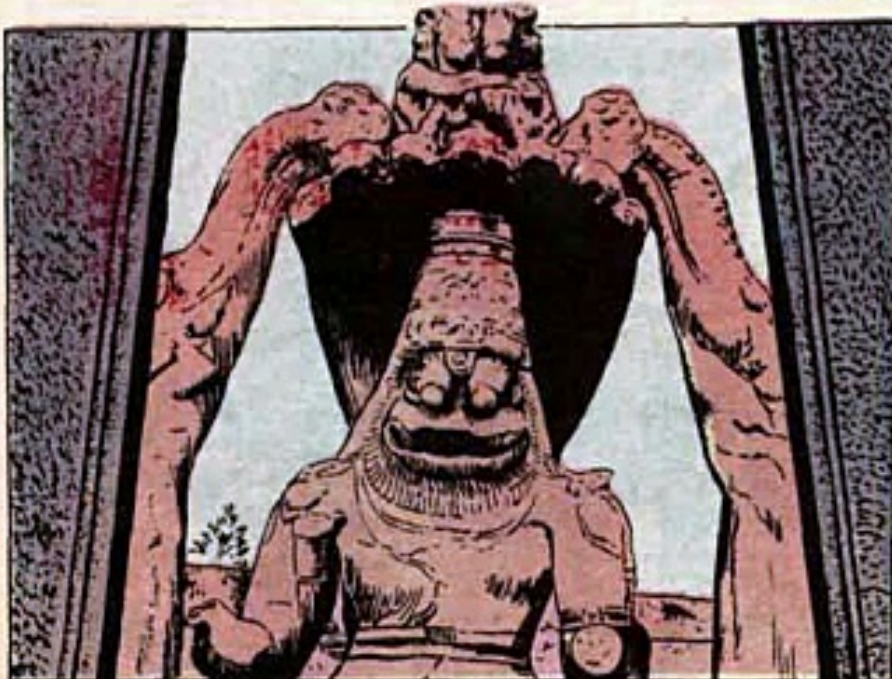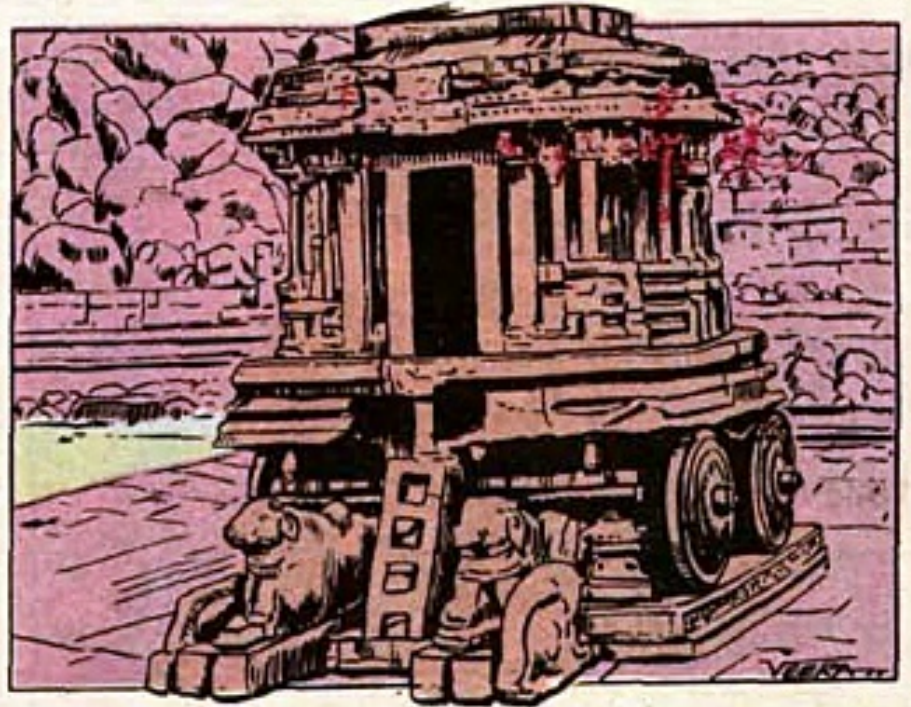
विजयनगर साम्राज्य के ऐश्वर्यकाल का एक नमूना लक्ष्मीनरसिंह की प्रतिमा है । यह शिल्पकला का एक उत्कृष्ट नमूना है । आज भी हम्पी में अनेक ऐसी प्रतिमाएं मौजूद हैं जो शिल्पकला के जगत में अद्भुत कृतियों के रूप में प्रसिध्द हैं ।
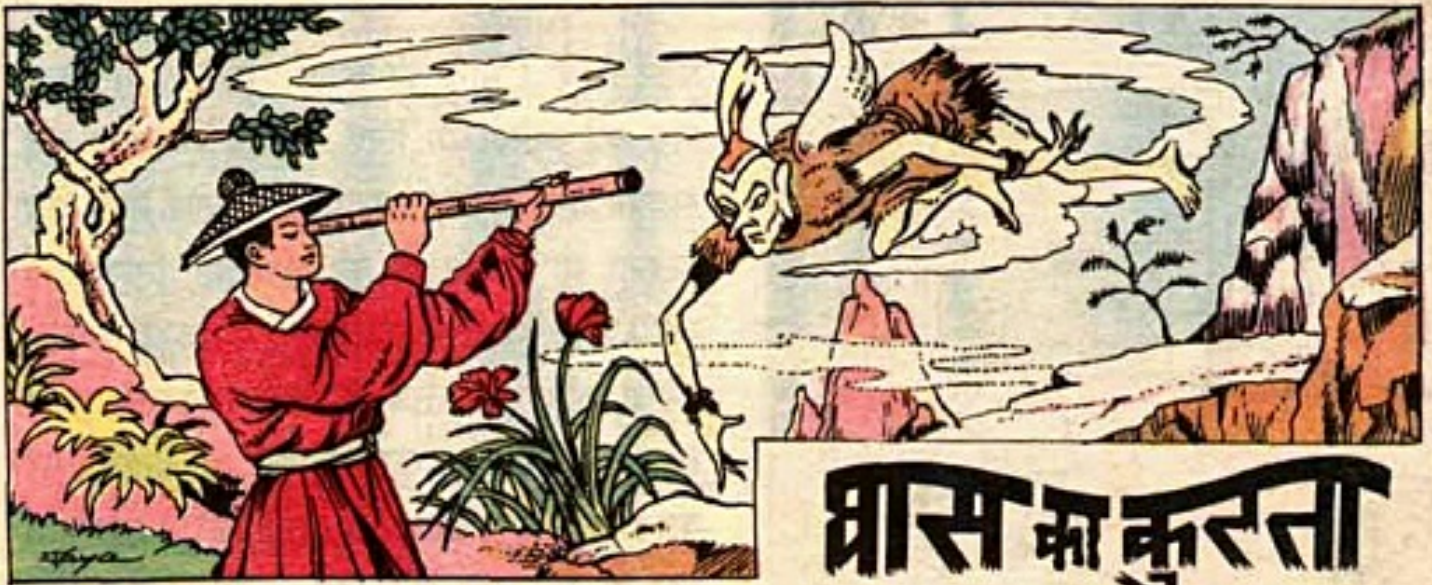
घास का कुरता

कई सदियों पहले की बात है, जापान के एक गांव में ओटोको नाम का एक चंचल स्वभाव का किशोर युवक रहा करता था। एक दिन अचानक उसे क्या सूझा उसने बांस की एक लकड़ी ली और उसकी गांठों में छेद करके उसे एक लंबी नली की तरह बना लिया। फिर ओटोको ने उसे आँख के आगे रखकर इसप्रकार देखा, जैसे दूरबीन से देखा जाता है। इस दूरबीन में उसे टेंगू जाति की एक डाइन दिखाई दी।

उस काल में यह एक साधारण बात थी। लोगों को जब तब टेंगू जाति की डाइनें दिखाई दे जाती थीं। पर वे जानते थे कि उन्हें छेड़ना नहीं चाहिए। ऐसा करना ख़तरे से ख़ाली नहीं था।

ओटोको ने टेंगू जाति की जिस डाइन को देखा, उसके एक लम्बी नाक थी। उसके कन्धों पर दो पंख थे जो अत्यन्त सुन्दर लग रहे थे। वह सूखी घास का बना एक कुरता पहने हुए थी। उस डाइन को अपनी ओर उड़कर आती हुई देखकर ओटोको ने सोचा कि जैसे भी हो उसका घास का कुरता हड़पना चाहिए।

डाइन जब ज़मीन पर उतरी, तब ओटोको दूरबीन में से आकाश की ओर देखते हुए इस तरह बोला रहा था, मानो कुछ अजूबा देख रहा है। "आह, वाह, यह कैसा अद्भुत है"— ओटोको के इन शब्दों को सुनकर डाइन को बड़ी उत्सुकता हुई। वह ओटोको के चारों तरफ़ उछलकूद करने लगी और गिड़गिड़ाते हुए बोली, "यह क्या है? थोड़ा मुझे भी देखने दो!"

"मैंने इतनी कठिनाई से जो दूरबीन तैयार की है, वह तुम्हें दे दूँ? अहा! इसके भीतर से देखने पर चांद कैसा सुन्दर दीख रहा है। ओह! उन पर्वतों की शोभा कैसी है! उन घाटियों के सौन्दर्य के बारे में क्या कहूँ?" शरारती ओटोको बोल रहा था।

जापानी लोक कथा

पहन लिया। घास का कुरता पहनते ही ओटोको सब की आँखों के लिए अदृश्य होगया। वह सबको देख सकता था, पर उसे कोई नहीं देख सकता था। ओटोको की खुशी का ठिकाना न रहा। वह उछलता-कूदता गाँव की बड़ी गली में पहुँचा और तरह-तरह के विचित्र करतब करने लगा। लोग उन करतबों को तो देखते, पर करनेवाले को न देख पाते। ओटोको ने लोगों के सिर पर रखे बोझ गिरा दिये, दुकानों का सामान तितर-बितर कर दिया।

राह चलनेवाली प्रजा यह सब देख घबरा उठी। सब लोग इधर-उधर छुप गये और चकित होकर इन करतूतों को देखने लगे। उसी समय एक अनजान बड़ा सेठ ठाठ से चलता हुआ उस रास्ते पर आया। अचानक उस सेठ को लगा कि किसी ने उसका बायाँ कान ऐंठ दिया है। वह क्रुध्द होकर पीछे की तरफ़ घूमा, तभी उसे लगा कि कोई उसका दायाँ कान मरोड़ रहा है। वह डोलता हुआ चारों तरह नज़र डालने लगा। तब किवाड़ों के छेदों से इस दृश्य को देख रहे लोग हँसने लगे।

उसी समय एक किसान शहर से कीमती वस्त्र ख़रीद कर उस रास्ते से निकला। अचानक उसके हाथ के कपड़े हवा में उड़े और दूर सड़क के किनारे के गंदले नाले में गिर गये।

तभी एक और घटना हुई। कुछ लोग उसी समय मछलियाँ पकड़कर लाये और उन्हें बेचने लगे। कुछ औरतें मछलियाँ ख़रीदने के लिए

ये सारे वर्णन सुनकर डाइन के मन में दूरबीन से देखने की जिज्ञासा बढ़ती गयी। चांद के बारे में तो उसके कौतुहल का पार नहीं था। उसने ओटोको से कहा, "मुझे इस नली के भीतर से देखने दो। मैं तुम्हें अपनी चप्पल दे दूँगी।" ओटोको चुप रहा तो उसने फिर कहा, "मुझे अपनी दूरबीन दे दो और मेरी टोपी ले लो।" पर ओटोको अपनी अकड़ दिखाता रहा। उसकी ऐंठ तब तक बनी रही, जब तक डाइन ने अपने घास के कुरते को देने का वचन न दे दिया। अंत में अपनी बांस की नली डाइन के हाथ में देकर उसने घास का कुरता अपने हाथ में लिया और चम्पत होगया।

डाइन भी वहाँ से चली गयी। उसके आँखों से ओझल होते ही ओटोको ने घास का कुरता

अच्छी-अच्छी मछलियाँ चुनने लगीं। इतने में एक बड़ी मछली उछलकर इस तरह हवा में तैरने लगी, मानो वह जिंदा हो। मछलीवाले अपना नुकसान होते देखकर उस मछली का पीछा करने लगे। जब वे उसके पास पहुँचे, वह पैरों के पास धम्म से गिर पड़ी और धूल से भर गयी।

इस प्रकार कुछ देर तक लोगों को तंग करके ओटोको थक गया और अपने घर चला गया। यह अदृश्य बना रहकर ही प्रवेशद्वार से अन्दर आया और घास का कुरता उतार देने के बाद अपनी माँ को दिखाई दिया। उसे अचानक अन्दर देख उसकी माँ चौंक पड़ी। आज उसे ओटोको में विचित्रता नज़र आयी।

कुछ देर में ओटोको निद्रामग्न होगया। तब उसकी माँ को घास का वह कुरता नज़र आया। वह अपने बेटे पर बड़बड़ाने लगी, छिः, यह घास का गन्दा कुरता ओटोको कहाँ से उठा लाया है? उसने उस कुरते को लेजाकर चूल्हे में डाल दिया। सूखी घास का वह कुरता पल भर में जलकर राख होगया।

ओटोको जब नींद से उठा तो अपने घास के कुरते को न देखकर परेशान हो उठा। उसने सारा घर छान मारा। फिर माँ से पूछा तो उसने सब सच-सच बता दिया। कुरते को चूल्हे में जला जानकर ओटोको को बड़ा गुस्सा आया, पर वह अब क्या कर सकता था? उसने सोचा कि हो सकता है, कुरते का अगोचर करनेवाला प्रभाव उसकी राख में भी मौजूद हो। इस आशा से उसने सारी राख को एक टोकरी में भर लिया। इसके बाद वह उस टोकरी को उठाकर पिछवाड़े में लेगया और अपने सारे कपड़े उतारकर आपादमस्तक उस राख को मलने लगा। उसने देखा, शरीर के जिस भाग पर राख लग जाती है, वह हिस्सा अदृश्य होजाता है। वह आश्चर्य चकित होकर राख मलता रहा। सारे बदन पर राख लग जाने के बाद ओटोको पूर्ण रूप से अदृश्य होगया। ओटोको के आनन्द का पार न रहा।

अब ओटोको गाँव से लगे नगर के मुख्य मार्ग की ओर चल पड़ा। वहाँ लोगों की भारी भीड़ थी। वह अदृश्य होकर भीड़ के बीच से चल रहा था, तब "मधुशाला" नामक एक दूकान से आयी शराब की तेज़ गंध ने उसे आकर्षित किया। दूकानदार एक बड़े पीपे से

शराब निकाल कर लोगों को दे रहा था ।

जब पीपे के पास कोई नहीं था, तब ओटोको पीपे के पास गया और उसकी नली से शराब गटागट पीने लगा । दूकानदार को गटागट की आवाज़ तो सुनाई दी, पर वह आवाज़ 'कहाँ से' और 'कैसे' आरही है, यह वह नहीं समझ पाया। उसने पास जाकर देखा तो उसे केवल आदमी का मुँह दिखाई दिया, शरीर नहीं । ओटोको के मुँह के दिखाई देने का एकमात्र कारण यह था कि ओटोको ने अपने मुँह पर जो शराब मल रखी थी, वह शराब के गिरने से धुल गयी । दूकानदार चकित हो उसका मुँह देख रहा था । इस बीच शराब और भी गिर गयी और धुल जाने के कारण ओटोको की दाढ़ी भी नज़र आने लगी ।

यह सब देखकर दूकानदार चिल्ला उठा । ओटोको उसकी चिल्लाहट सुनकर भयभीत हो उठ खड़ा हुआ । उसकी देह से पसीना छूटने लगा। पसीने से तर हुए उसके अंग निखरे हुए चित्र की भाँति प्रकट होने लगे । ओटोको समझ गया कि उसका राज़ प्रकट होगया है और अब उसकी ख़ैर नहीं । वह दूकान से बाहर निकल आया और मुख्य मार्ग पर दौड़ने लगा। दूकान के सब लोग उसका पीछा करने लगे । ओटोको दौड़ता चला गया और सामने आयी एक नहर में कूद पड़ा । उसने अपना सिर पानी के बाहर निकाल रखा था और जाड़े के कारण वह थर-थर काँप रहा था ।

ओटोको का पीछा कर रहे लोगों ने अब उसे पहचान लिया और उसे नहर से बाहर खींचकर उस पर एक कबंल ओढ़ा दिया ।

गाँव के मुखिया ने ओटोको से पूछा, "ओटोको, तेरी यह दुर्गति कैसे होगयी?"

ओटोको ने शर्मिन्दा होकर गाँववालों को सारा वृत्तान्त सुनाया कि उसने टेंगू डाइन को धोखा देकर किस प्रकार घास का कुरता प्राप्त किया और कैसे अदृश्य रहकर लोगों को हैरान किया। सब लोग उसकी कहानी सुनकर हँसते-हँसते लोट-पोट होगये । उन्होंने ओटोको से कहा, "अरे, ओटोको! धोखा देने के लिए क्या तुम्हें टेंगू डाइन ही मिली थी और हैरान करने के लिए हम लोग?"

आदिकाल में कालनेमि नाम का एक बहुत भयंकर दानव हुआ। उसके सौ सिर थे और अनेक हाथ थे। देखने में वह सौ शिखरोंवाले भयंकर काले पर्वत के समान जान पड़ता था। असाधारण शक्तिशाली कालनेमि ने ब्रह्मा को लक्ष्य कर घनघोर तपस्या की और अनेक वर प्राप्त कर लिये। अपने बहुविध बल के कारण अब वह अत्यन्त उद्धत और अहंकारी हो उठा था। उसकी आसुरिक शक्ति में अब तपस्या से प्राप्त वरदानों का बल भी आ मिला था।

उस काल में देव और दानवों के बीच बहुधा युद्ध हुआ करते थे। उन युद्धों में कभी दानवों की विजय होती तो कभी देवता विजयी हो जाते थे। एक बार युद्ध में देवताओं को भारी विजय प्राप्त हुई और उन्होंने दानवों को पराजित कर भागने के लिए विवश कर दिया। जब कालनेमि को दानवों की इस लज्जाजनक पराजय का हाल मालूम हुआ तो वह अत्यन्त क्रुद्ध हो उठा। उसने अनेक दैत्यराजों को एकत्रित कर उन्हें युद्ध के लिए प्रोत्साहित किया। उसने विशाल दानव-सेना लेकर इंद्र पर आक्रमण कर दिया। इंद्र के सेनापतित्व में देवताओं ने तथा कालनेमि के नेतृत्व में दानवों ने भयंकर युद्ध किया। कालनेमि साक्षात् काल की तरह युद्ध कर रहा था और दानव उसकी शक्ति से शक्तिमान होकर देवताओं पर टूट रहे थे।

उस युद्ध में कालनेमि ने न केवल इंद्र को, बल्कि सभी दिक्पालों को भी बुरी तरह पराजित किया। इस विजय के कारण तीनों लोक

कालनेमि के आधिपत्य में आगये । भगवान विष्णु ने देवताओं के इस अपमान को देखा, पर वे मौन बने रहे । उन्हें मालूम था कि अभी तक कालनेमि की मृत्यु का समय निकट नहीं आया है। इसीलिए उन्होंने किसी प्रकार का प्रतिकार नहीं किया ।

इधर त्रिलोक-विजय के बाद कालनेमि का घमंड और भी अधिक बढ़ गया । उसने अहंकार के वशीभूत होकर विष्णु पर भी विजय प्राप्त करने का निश्चय कर लिया । वह एक दिन विष्णु के पास गया और उन्हें ललकारकर बोला, 'विष्णु, तुमने मधु और कैटभ जैसे हमारे मित्रों का संहार किया है । दैत्यकुल के लिए रत्न-समान हिरण्यकश्यप को तुमने अपने बाघनखों से चीरकर मार डाला । तुमने हमारे राजा बलि को पाताल में भेजकर तीनों लोकों पर अधिकार कर लिया । तुमने हमारी दैत्य-ललनाओं के आँसुओं से देवकुल रूपी खेतों को सींचकर उन्हें प्रवृद्ध किया । तुम्हारे इन सारे दुष्कृत्यों का प्रतिकार लेने के लिए मैं तुम्हारे पास आया हूँ ।''

भगवान विष्णु ने कालनेमि को चेतावनी देते हुए कहा, ''सुनो, दैत्यराज! दर्प के कारण तुम अनर्गल प्रलाप करने लगे हो । इसका फल तुम्हारे लिए अनुकूल नहीं होगा । शूरवीर व्यक्ति कभी दंभ नहीं करता और न तो तुम्हारी तरह ताल ठोंकता है । तुमने ब्रह्मा से वरदान प्राप्त कर अहंकारवश अनेक दुष्कृत्य किये हैं । क्या तुम पहले हुई दानवों की दुर्गति की बात भूल गये? वही गति अब तुम्हारी भी होनेवाली है । तुम्हारा वध करके मैं देवताओं को उनका खोया पद वापस दिलाऊँगा ।''

भगवान विष्णु के इन वचनों को सुनकर कालनेमि क्रुद्ध हो उठा । उसने अपनी शक्तिशाली गदा से गरुड़ को निशाना बनाया और भीषण हुंकार किया । वह गदा इस प्रकार गरुड़ को जा लगी, जैसे वज्रायुद्ध किसी पर्वत से जा टकराया हो । कालनेमि का यह दुस्साहस देखकर महाविष्णु चकित रह गये । उन्होंने गरुड़ की पीड़ा को तत्काल दूर किया और अपने एवं गरुड़ के शरीर का विस्तार किया । इसके बाद महाविष्णु ने कालनेमि को लक्ष्य कर अपना सुदर्शन-चक्र छोड़ा । सुदर्शन चक्र ने बड़े वेग से जाकर कालनेमि के सिरों एवं हाथों को काट डाला । इस

पर भी उस दानव का शरीर ज्यों का त्यों खड़ा रहा। उसके शरीर को गिराने के लिए गरुड़ ने अपने पंख फड़फड़ाकर ऐसा झंझावात उत्पन्न किया कि कालनेमि का शरीर भी गिर गया। इस दृश्य को देखकर कालनेमि के दैत्य अनुचर भयभीत होगये और वहीं जड़वत् खड़े रह गये। भगवान विष्णु ने उन सबका भी संहार किया।

कालनेमि सहित दैत्यों के संहार के बाद ब्रह्मा, इंद्र सहित समस्त देवताओं ने भगवान विष्णु के दर्शन कर उनका प्रस्तवन किया।

भगवान विष्णु ने प्रसन्न भाव से इंद्रादि देवताओं से कहा, "अब भविष्य में तुम्हें दानवों का भय नहीं रहेगा। तुम अपने लोकों के स्वामी हो! अब निश्चिंत होकर राज्य करो! यज्ञ भी अब निर्विघ्न संपन्न होंगे। पर सदा सतर्क रहकर दैत्यों की गतिविधि का अवलोकन करते रहो!"

इसके पश्चात् भगवान विष्णु क्षीर सागर को प्रयाण कर गये और शेष-शैय्या पर शयन कर योगनिद्रा में लीन होगये।

भगवान विष्णु के योग-निद्रा में मग्न रहते हुए ही कृतयुग समाप्त होगया। इसके पश्चात् त्रेतायुग भी समाप्त होने को आया। तभी भूदेवी आक्रोश प्रकट करने लगी कि उस पर प्रजा का भार बढ़ गया है और वह इस भार को वहन नहीं कर पारही है। उसका रुदन सुनकर देवता ब्रह्मा के पास गये और भूदेवी की व्यथा को उन्हें सुनाया। ब्रह्मा देवताओं के साथ भगवान विष्णु के पास गये और उन्हें योगनिद्रा से जगाया।

भगवान विष्णु ने धीरे से आँखें खोलकर देवताओं को देखा और उनसे कुशल-प्रश्न
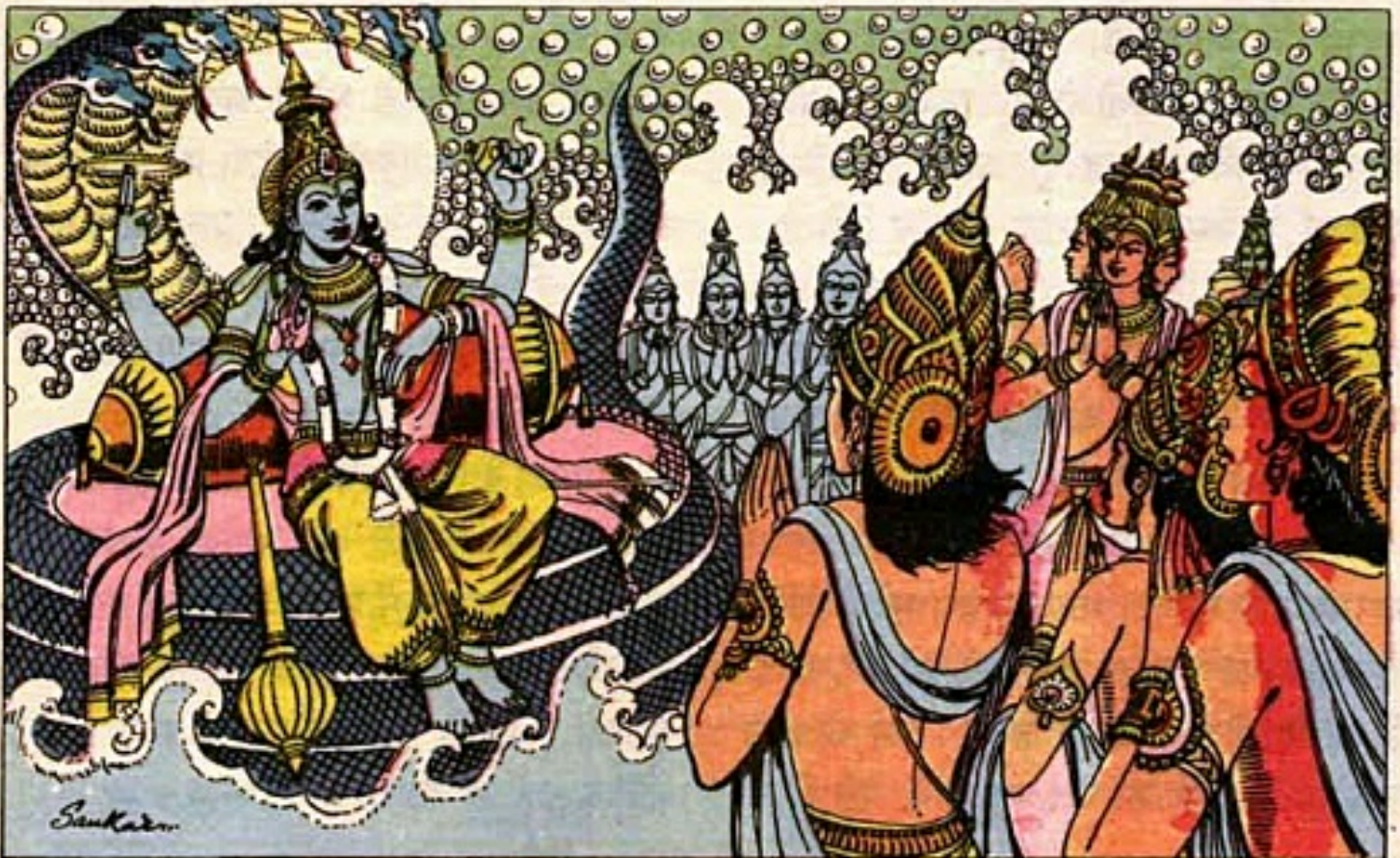
किया, "देवगण, आप यहाँ किसलिए आये हैं? आप सब कुशल से तो हैं न? समस्त लोक असुरों के अत्याचारों से मुक्त तो है न?"

तब ब्रह्मा ने अग्रणी होकर करबद्ध हो भगवान विष्णु से निवेदन करते हुए कहा, "महाविष्णु, राजाओं में किसी प्रकार का वैमनस्य नहीं है। सत्य एवं धर्म स्थित हैं। युगों का क्रम ठीक प्रकार चल रहा है। देवकार्य एवं पितरों के कार्य संतोषपूर्वक संपन्न हो रहे हैं। कोई किसी प्रकार की व्याधि से पीड़ित नहीं है। मानव पूर्णायु प्राप्त कर रहे हैं। प्रत्येक नगर एवं ग्राम अपार जनसंख्या से भरा है। भगवान, बस भूदेवी पीड़ित है क्योंकि वह प्रजा का भार वहन नहीं कर पा रही है और इसलिए रुदन कर रही है। धर्म की हानि न हो और पृथ्वी का भार घट जाये, ऐसे किसी उपाय के लिए प्रार्थी होकर हम आपके पास आये हैं। इसलिए, हम सब आपसे प्रार्थना करते हैं कि आप मेरुपर्वत पर पधारकर वहाँ हम पर कृपालु हो हमारे कर्त्तव्य का बोध करायें !"

ब्रह्मा की प्रार्थना सुनकर भगवान विष्णु उठे, अपने वस्त्रालंकरण ठीक किये और अपने शंख, चक्र, गदा, पद्म आदि चिन्ह धारण कर प्रस्थान के लिए उद्यत होगये। वे गरुड़-वाहन पर बैठकर क्षण भर में ही मेरु पर्वत पर जा पहुँचे। उस पर्वत पर प्राचीन काल में विश्वकर्मा द्वारा निर्मित एक दिव्य सभाभवन था।

उस सभाभवन में महाविष्णु एक ऊँचे आसन पर विराजमान हुए। देव समुदाय भी यथोचित स्थानों पर आसीन हुआ। उस सभा में यक्ष, गंधर्व, सिद्ध, विद्याधर, नाग आदि भी उपस्थित थे।।

तभी उस सभा में भूदेवी अत्यन्त भारग्रस्ता और दुखी हो आ पहुँची। भूदेवी की दशा देख सब आपस में चर्चा करने लगे। वायु देव ने हाथ उठाकर कोलाहल शांत किया और भूदेवी से कहा, "देवि, अपने आगमन का कारण बताने की कृपा करो!"

"समस्त देवगण! आपसे कोई बात गुप्त नहीं है। पृथ्वी पर राजाओं और प्रजाओं के भार के बढ़ जाने के कारण मैं त्रस्त होगयी हूँ। यह भार इस सीमा तक बढ़ गया है कि मैं उसके नीचे दबी जा रही हूँ। यदि यह भार कम न हुआ, तो मैं जीवित नहीं रह सकती। श्री भगवान महाविष्णु

कृपा करें तो यह कार्य सरलतापूर्वक संपन्न हो सकता है। आप सब मेरे सम्माननीय हैं, बड़े हैं, मेरी सहायता करें!" भूदेवी ने व्याकुल भाव से अपनी स्थिति स्पष्ट कर दी।

भूदेवी के वचनों को सुनकर सभा में उपस्थित देव, गन्धर्व, यक्ष, नाग आदि सारे समुदायों ने परस्पर विचार-विमर्श किया और ब्रह्मदेव से निवेदन किया, "पितामह! आप ज्येष्ठ हैं, प्रजापति हैं, सृष्टिकर्ता हैं, आप कोई उपाय निकालें। भूदेवी की पीड़ा का हरण करना हम सबका परम कर्त्तव्य है।"

तब ब्रह्मा ने खड़े होकर सभासदों से कहा, "एक दिन संध्या के समय मैं तथा महामुनि कश्यप समुद्र-तट पर बैठे तत्व-चर्चा कर रहे थे। तभी चंद्रोदय हुआ। गंगा-संगम के कारण उफान पाकर समुद्र आकाश तक उठ गया और हम जहाँ बैठे थे, वहाँ पर भी आ पहुँचा और उसने हमें भिगो दिया। महामुनि कश्यप और मुझे हँसी आगयी। मैंने समुद्र से कहा, 'यह कैसा बालपन कर रहे हो? शांत हो जाओ!' मेरे शब्द सुनकर समुद्र तुरन्त शांत होगया। इसके पश्चात् वह मानव रूप धरकर गंगा के साथ हमारे सम्मुख प्रत्यक्ष हुआ। उन दोनों को देखकर मेरे अन्दर भविष्य का एक रूप साकार हो उठा। मैंने कहा, 'हे सागर! तुमने अपने इस रूप में अपना राजस प्रकट किया है। अतः तुम पृथ्वी पर एक राजा के रूप में जन्म धारण करो। मेरी बात मानकर तुम तत्क्षण शांत होगये, इसलिए तुम शांतनु नाम से

जाने जाओगे। देवी गंगा मानव रूप में तुम्हारी पत्नी होगी।'

"मेरी बात सुनकर सागर ने विनम्रतापूर्वक निवेदन किया, 'पितामह! पर्व के दिनों में वायु के प्रताड़न के समय, चंद्रोदय की बेला में उफान से भर उठना मेरा स्वाभाविक लक्षण है। यह कार्य मैंने किसी अहंकार या दुर्बुद्धि के कारण नहीं किया। ऐसी स्थिति में मुझे मानव होने का शाप देना कहाँ तक न्याय-संगत है?'

'वत्स, लोक-कल्याण की कामना से प्रेरित होकर मैंने ये बातें कही हैं। यह शाप नहीं है।तुम पवित्र भरतवंश में जन्म धारण करो! इस गंगा के द्वारा वसुओं को जन्म देकर उन्हें वशिष्ठ के शाप से मुक्त करो! इसके बाद सत्यवती नाम की युवती से दो पुत्रों को जन्म देकर शरीर का त्याग कर दो!

सुनने के बाद सारे सभासदों ने उनकी स्तुति की। उसी समय उस सभा में नारदमुनि का आगमन हुआ।

नारदमुनि ने वीणा-वादन करके भगवान विष्णु का स्तवन किया और समस्त देवताओं को आनन्द प्रदान किया। इसके बाद वे भगवान विष्णु से बोले, "हे भगवान, इन समस्त देवताओं ने पृथ्वी के भार को कम करने के लिए राजाओं और प्रजाओं के नाश का जो संकल्प लिया है, वह आपके सहयोग के बिना कैसे सफल हो सकता है? इसलिए पृथ्वी पर आपका अंशावतार आवश्यक है। आपको अपने दिव्य अंश के साथ पृथ्वी पर जन्म धारण करना होगा, अन्य देव-अंशों को भी प्रेरित करना होगा। तभी देवताओं का यह कार्य संपन्न हो सकेगा। इसके अलावा एक अत्यावश्यक कार्य और भी है, जो अन्य देव-अंशों से उत्पन्न मानवों के लिए असंभव है। उसी के बारे में चेतावनी देने के लिए मैं इतनी शीघ्रता से यहाँ आया हूँ। आप सुनें! देवासुर संग्राम में जिन असुरों का आपके द्वारा हनन हुआ, वे सब मानव रूप में जन्म लेकर पृथ्वी को आकीर्ण किये हुए हैं। त्रेतायुग में श्रीराम के हाथों से रावण का संहार हुआ। इसके बाद श्रीराम के आदेश से शत्रुघ्न ने रावण के भगिनीपुत्र मधु एवं उसके पुत्र लवणासुर का संहार किया। शत्रुघ्न ने असुर मधु की नगरी मधुपुरी का नाश करके मथुरा नाम से एक महानगर का निर्माण किया। उस पर अनेक राजाओं ने अनेक पीढ़ियों

ये दो पुत्र वंश को बढ़ाने वाले होंगे।' मैंने कहा।

"उसी शांतनु के एक पुत्र विचित्रवीर्य से धृतराष्ट्र एवं पांडु नामक दो पुत्रों का जन्म होगा। कालान्तर में धृतराष्ट्र के सौ पुत्र तथा पांडु के पाँच पुत्र होंगे। राज्याकांक्षा के कारण धृतराष्ट्र के उन सौ पुत्रों और पांडु के पाँच पुत्रों के बीच महायुद्ध होगा। उस युद्ध में पृथ्वी के समस्त राजा काम आयेंगे। लक्ष-लक्ष हाथी, घोड़े, सैनिक मृत्यु को प्राप्त होंगे। पृथ्वी का भार घट जाने के कारण भूदेवी सुखी हो जायेगी। कलह उत्पन्न करनेवाले कलि का अंश धृतराष्ट्र की पत्नी गांधारी के गर्भ से और यमराज का अंश पांडु-पत्नी कुंती के गर्भ से उत्पन्न होगा। अन्य अनेक देवताओं के अंश विभिन्न मानवों के रूप में जन्म लेंगे।"

ब्रह्मा के मुँह से भविष्य का सारा विवरण
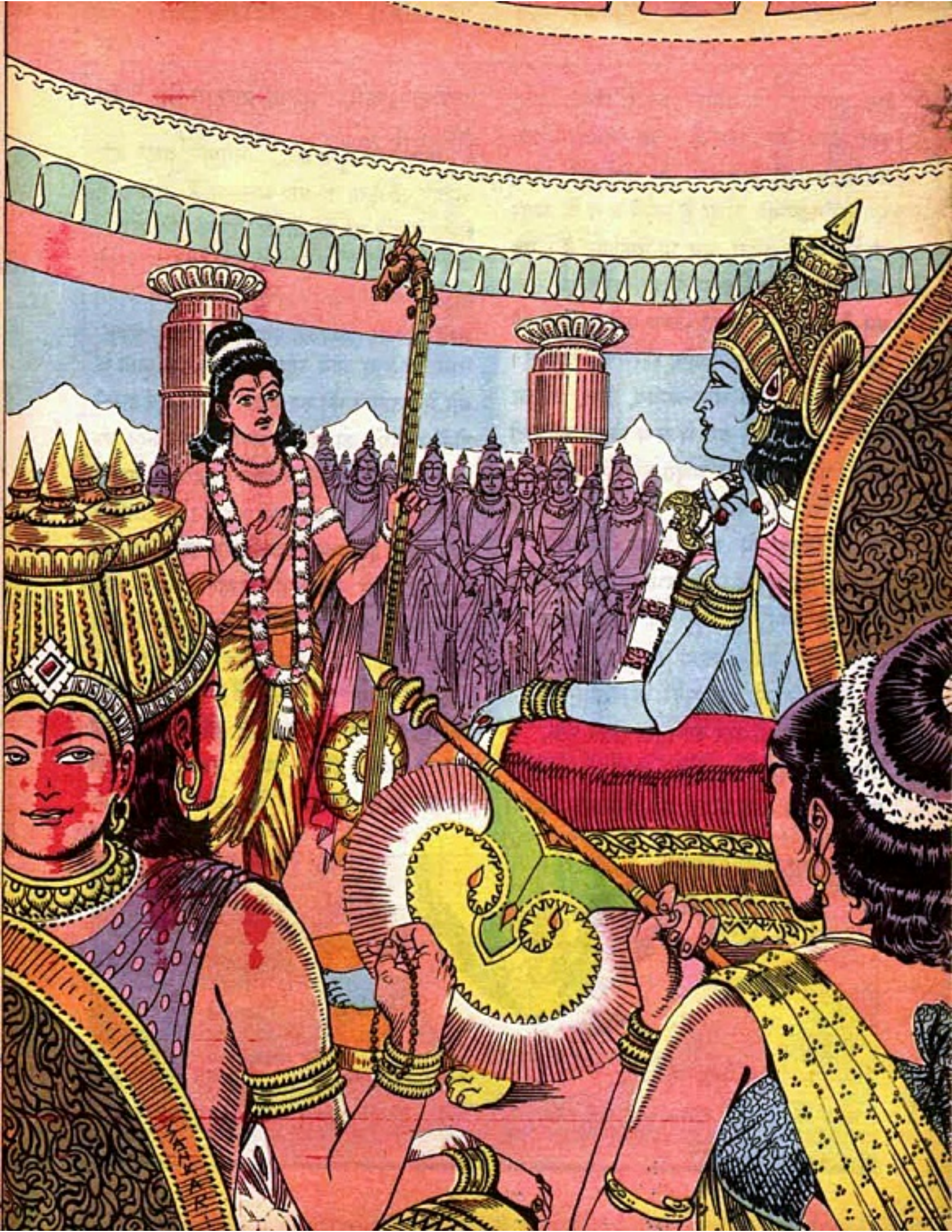
तक शासन करके उसका विकास किया ।किन्तु अब उसका राजा कंस है । वह भोजवंशी राजा उग्रसेन का पुत्र है । कंस और कोई नहीं, आदि युग का कालनेमि असुर है । पूर्व जन्म के असुर संस्कार उसके भीतर अब भी विद्यमान हैं । वह अपने पिता को कारागार में डालकर स्वयं राजा बन बैठा है । इसी प्रकार अन्य अनेक असुर भी पृथ्वी पर मानव रूप में जन्म धारण कर चुके हैं । कालनेमि के सभी बन्धु-बान्धव, मित्र, अनुचर कंस के सेवकों के रूप में जन्म लेकर कालिन्दी के तट पर, वृंदावन में, मथुरा नगरी में तथा अन्य स्थानों पर भी फैले हुए हैं । कुछ असुर प्राग्ज्योतिषपुर में जन्म लेकर नरकासुर के सहायक बने हुए हैं । उन सभी असुरों का संहार करने के लिए, हे प्रभु, आपको अवश्य ही मानव-जन्म धारण करना होगा ।"

नारदमुनि की बातें सुनने के पश्चात् भगवान विष्णु ने ब्रह्मा की ओर अभिमुख होकर पूछा, "मैं अवश्य ही मानव रूप लेकर पृथ्वी पर उतरूँगा, पर प्रजापति, आप बतायें, मैं कहाँ और किससे जन्म धारण करूँ? पितामह, आप मेरे लिए निर्देश करें!"

ब्रह्मा ने विष्णु से कहा, "भगवान, वरुण और कश्यप की कथा तो आप जानते ही हैं । कश्यप ने वरुण के यज्ञ की धेनुओं का हरण कर लिया था। जब उन धेनुओं को लौटाने का प्रसंग आया तो कश्यप की पत्नियों—अदिति और सुरभि ने उन गायों को पुनः वरुण को लौटाने का निषेध किया। वरुण मेरे पास आये और कश्यप के इस कृत्य के बारे में बताया । मैंने रुष्ट होकर कश्यप एवं उनकी दोनों पत्नियों को मानव जन्म धारण करने का शाप दिया । अब वही कश्यप वसुदेव के नाम से कंस की गायों के अधिपति बने हुए हैं । अदिति और सुरभि इस समय देवकी और रोहिणी के रूप में वसुदेव की पत्नियां हैं । इसलिए आप अपने अंश को दो भागों में विभक्त कर वसुदेव की इन दोनों पत्नियों के भीतर प्रवेश कीजिए!"

भगवान विष्णु ने प्रजापति ब्रह्मा के आवेदन को स्वीकार किया और सभा को विसर्जित कर सबको विदा दी । इसके पश्चात् वे अपने निवास-स्थान क्षीरसागर को लौट गये ।
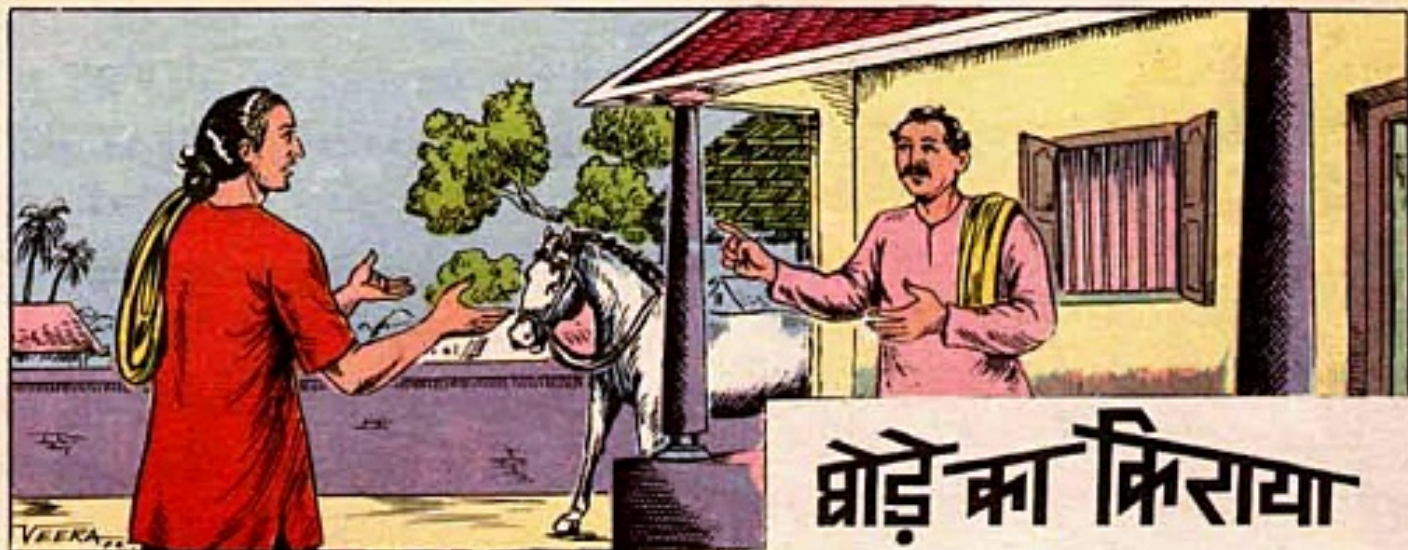
घोड़े का किराया

भरतपुर गाँव में मोहन और रामदीन नाम के दो किसान रहते थे । इनमें मोहन अत्यन्त सीधा-सादा और साधु स्वभाव का था तथा रामदीन तेज़ और चालाक था। उन दोनों के बारे में गाँव के सभी लोग अच्छी तरह जानते थे । सबको मालूम था कि रामदीन की तीक्ष्ण बुध्दि के सामने टिक पाना किसी के बूते का काम नहीं है और जहाँ तक हो, उससे उलझना नहीं चाहिए।

मन्दबुध्दि मोहन अत्यन्त ग़रीब था। उसके पास एक खच्चर भी नहीं था। एक बार मोहन ने अपने खेत में कन्द पैदा किये और उन्हें शहर में लेजाकर बेचना चाहा । वह अपने एक और किसान दोस्त के पास गया और बोला, "मनोहर, क्या तुम कल के लिए एक खच्चर उधार दे सकते हो?"

"भाई मोहन, मैं अवश्य ही अपना खच्चर तुम्हें दे देता। पर कल दोपहर से ही उसका पता नहीं है, क्या जाने कहाँ चला गया?" मनोहर ने जवाब दिया ।

"अब मैं क्या करूँ? मैं अपने कंद कल शहर ले जाना चाहता हूँ।" मोहन ने चिंता प्रकट की।

मनोहर ने समाधान निकालते हुए कहा, "दोस्त, गाँव के दूसरे छोर पर जयन्त नाम का जो आदमी रहता है न, उसके पास एक घोड़ा है। है तो वह बड़ा कंजूस, पर शायद एक दिन के लिए तुम्हें घोड़ा दे दे ।"

मोहन अब जयन्त के घर पहुँचा और उससे मिन्नत करके बोला, "भाई, मुझे अपना घोड़ा एक दिन के लिए दे दो, जरूरी काम आ पड़ा है।"

जयन्त कुछ देर सोचता रहा, फिर बोला, "घोड़ा तो दे दूँगा, पर उसका किराया होगा।"

"मेरे पास तो एक कानी कौड़ी भी नहीं है। मैंने सोचा था तुम अपना घोड़ा यों ही दे दोगे।"

२५ वर्ष पूर्व 'चन्दामामा' में प्रकाशित एक कहानी

"मोहन, देखो, मेरा खच्चर मिल गया। अब तुम अपना माल इस पर लाद कर शहर जा सकते हो।"

"मैंने तो जयन्त का घोड़ा तय कर लिया है।" मोहन ने उत्तर दिया।

"अब मेरा खच्चर है न! जयन्त के घोड़े का अब क्या करना है?" मनोहर ने समझाया।

"पर दोस्त, मैं तो उसे किराये के रूप में पांच कुम्हड़े अग्रिम दे आया हूँ। अब मैं घोड़ा लेने से इनकार कर दूँ, तब भी वह मेरे पाँच कुम्हड़े नहीं लौटायेगा।" मोहन मायूस होकर बोला। "अब क्या करें?" मनोहर ने चिंता प्रकट की।

मोहन ने निराश स्वर में कहा।

"नहीं, यों ही मैं किसी को कुछ नहीं देता। अगर तुम्हें घोड़ा चाहिए तो मेरे घोड़े का किराया पंद्रह कुम्हड़े है।" जयन्त बोला।

"मेरे पास तो पांच कुम्हड़े ही हैं। बाकी दस मैं थोड़े दिन बाद दे सकता हूँ।" मोहन ने कहा।

"पांच कुम्हड़े तो तुम इसी समय दे जाओ, बाकी दस का इंतज़ाम कर लो। पूरे पंद्रह मिलने के बाद ही मैं तुम्हें घोड़ा दे सकूँगा।" जयन्त ने साफ़ कह दिया।

मोहन ने जयन्त की शर्त मान ली और घर से पांच कुम्हड़े लाकर कंजूस जयन्त को सौंप दिये।

दूसरे दिन सुबह के समय मनोहर अपना खच्चर लेकर मोहन के घर पहुँचा और बोला,

ठीक उसी समय रामदीन वहाँ आ पहुँचा। उसने सारा वृत्तान्त सुनकर मोहन को सलाह दी, "तुम अभी जयन्त के पास जाओ! उससे यह कहकर कि अब मुझे घोड़े की जरूरत नहीं है, अपने कुम्हड़े वापस ले आओ!"

"जयन्त को देखने से ही मेरी तो रूह काँपती है।" मोहन ने अपनी असमर्थता प्रकट की।

"चलो, मैं तुम्हारे साथ चलता हूँ और तुम्हारे कुम्हड़े तुम्हें वापस दिलवाता हूँ।" यह कहकर रामदीन मोहन के साथ चल पड़ा। सारा तमाशा देखने के लिए मनोहर भी उनके साथ हो लिया।

तीन लोगों को एक साथ आया देखकर जयन्त ने पूछा, "कहो, कैसे आना हुआ?"

"घोड़े के लिए आये हैं। तुम्हारा घोड़ा कहाँ है?" रामदीन ने अपनी तरफ़ से बात शुरू की।

"देखते नहीं, सामने ही खड़ा है! पर क्या बाकी दस कुम्हड़े लाये हो? पूरा किराया लिये बिना मैं अपना घोड़ा नहीं दूँगा।" जयन्त ने स्पष्ट कहा।

"हम कहाँ इनकार कर रहे हैं? पर पहले घोड़ा देखने तो दो! वह हमारे काम का है भी या नहीं?" रामदीन बोला।

"काम का न होने का क्या मतलब है? घोड़े का मतलब घोड़ा है।" जयन्त ने कहा।

"तुम तो बस इतना ही जानते हो। पहले हमें घोड़े को माप कर देखने दो!" यह कहकर रामदीन ने घोड़े की पीठ को अपनी बालिश्त से मापना शुरू किया। मापते हुए वह मोहन से बोला, "मोहन, तुम्हारे लिए कम से कम दो बालिश्त की जगह होनी चाहिए। अगर तुम बीच में बैठते हो तो मुझे एक बालिशत चार अंगुल की जगह अवश्य चाहिए। तुम्हारे पीछे मैं बैठ जाऊँगा तो मेरी पत्नी मेरे पीछे बैठ सकती है। उसके लिए भी दो बालिश्त की जगह होनी चाहिए। तुम्हारी पत्नी ज़रा भारी है, उसके लिए दो बालिश्त चार अंगुल जगह ठीक रहेगी। यदि उसे आगे बैठा देते हैं तो बच्चों के लिए जगह की अवश्यकता पड़ेगी। तुम्हारी बेटी अभी नन्ही मुन्नी ठहरी, उसे घोड़े की गर्दन पर बैठा देंगे। सबसे छोटा बेटा तुम्हारी पत्नी की गोद में बैठ जायेगा।" इस तरह रामदीन मोहन को घोड़े पर बैठने का हिसाब समझाने लगा।

रामदीन के मुँह से ये सारी बातें सुनकर जयन्त का कलेजा काँप उठा। वह चिल्लाकर बोला, "बंद करो अपनी बकवास। तुम्हारी बुध्दि तो भ्रष्ट नहीं होगयी? कहीं घोड़ा इतने लोगों का बोझ ढो सकता है?"

"यह बात घोड़ा देख लगा। यह उसकी समस्या है। हमारी समस्या तो यह है कि क्या हम सब इस घोड़े पर बैठकर तीर्थाटन कर सकते हैं या नहीं?" रामदीन ने चालाकी दिखाते हुए कहा।

"तो क्या तुम सब लोग मेरे घोड़े पर सवार होकर तीर्थाटन करना चाहते हो? पर मोहन ने तो कहा था कि उसे शहर आने-जाने के लिए घोड़ा चाहिए?" जयन्त ने चकित होकर पूछा।

"शहर तीर्थाटन भी तो हो सकता है! खैर कोई बात नहीं! हमें घोड़े पर थोड़ी तक़लीफ़ तो

अवश्य होगी, पर मैंने देख लिया है, घोड़े पर जगह है ।" रामदीन बोला ।

"अच्छा हुआ, जो तुमने घोड़ा लेजाने से पहले ही मुझे बता दिया । मेरे घोड़े का दम निकलने से रह गया । मैं तुम्हें अपना घोड़ा किराये पर नहीं दूँगा, समझे!" जयन्त ने गरज कर कहा।

"तुमने घोड़ा देने का वचन दिया है, अब मुकरना ठीक नहीं ।" यह कहकर रामदीन मोहन की तरफ घूमा और बोला, "सुनो, मैं तुम्हारी माँ की बात तो भूल ही गया । उसे कहाँ बिठाया जायेगा? मुर्गी और बकरी को किधर लटकायेंगे?" रामदीन ने हतोत्साह प्रकट करते हुए कहा

अब तो जयन्त आपे में नहीं रहा । उसका पारा चढ़ गया ।वह चीखकर बोला, "क्या तुम मेरे घोड़े को मार डालना चाहते हो? मैं तुम लोगों को अपना घोड़ा हर्गिज़ नहीं दूँगा ।"

"तुमने अगर घोड़ा न दिया तो कचहरी में चलना होगा, समझे!" रामदीन ने धमकी दी ।

"तुम लोग अपने पाँच कुम्हड़े वापस ले जाओ, मैं यह सौदा नहीं करना चाहता ।" जयन्त खीजकर बोला ।

"हमारी शर्त पंद्रह कुम्हड़ों की थी । अब तुम पाँच कुम्हड़ों की बात कैसे करते हो? यह तो सरासर धोखा है, दग़ा है ।" रामदीन ने भी अपना तेवर दिखाया ।

"पर मोहन ने तो मुझे पाँच कुम्हड़े ही दिये थे न?" जयन्त ने कहा ।

"तुमने पाँच कुम्हड़े लेकर घोड़ा तो नहीं सौंपा न? तुमने पंद्रह कुम्हड़े चुकाने पर ही घोड़ा सौंपने की बात कही थी न? अगर अब तुम यह सौदा रद्द करना चाहते हो तो पंद्रह कुम्हड़ों का दंड भरो और हमें कुम्हड़े दो!" रामदीन ने जयन्त को सबक सिखाते हुए कहा ।

जयन्त गुस्से से पागल होकर घर के अन्दर गया और पंद्रह कुम्हड़े लाकर बोला, "यह लो पंद्रह कुम्हड़े! मैं तुम्हें और तुम्हारे सौदे को हाथ जोड़ता हूँ ।"

इसके बाद मोहन, रामदीन और मनोहर वे पंद्रह कुम्हड़े लेकर अपने घर लौट आये ।

बुरा-भला

१

परदेशी राजदीप तथा प्रियंवदा ने वृक्ष के तने की खोखल में बने सुरंग के प्रवेश-द्वार में प्रवेश करके भीतर से कुंडी लगा दी। कुछ ही क्षणों में शतनंदन गाँव के निवासियों ने देखा कि राजदीप और प्रियंवदा का कहीं पता नहीं है। वे उन्हें हर छिपने योग्य स्थान पर ढूंढ़ने लगे, पर उन्हें कहीं न पाकर वे इस निर्णय पर पहुँचे कि सचमुच ही परदेशी राजदीप भागवत पुरुष था और प्रियंवदा साक्षात् देवी।

राजदीप और प्रियंवदा के अंतर्धान होजाने से जय और विजय जड़ चकित होगये। अचानक ग्रामवासियों ने उन पर मिलकर हमला कर दिया और उन्हें वहाँ से भगाकर धमकी दी "दस वर्ष तक यदि तुम दोनों इस शतनंदन ग्राम के समीप भी दिखाई दिये तो तुम्हारे प्राणों की ख़ैर नहीं।"

इस बार सुरंग की यात्रा प्रियंवदा को कठिन प्रतीत नहीं हुई। परदेशी राजदीप का साथ उसे अत्यन्त प्रिय लग रहा था। साथ में खाने-पीने की सामग्री भी थी, इसलिए भूख-प्यास का भी कोई डर नहीं था।

"राजमहल में प्रवेश करने के बाद हमें क्या करना होगा?" राजदीप ने प्रियंवदा से पूछा।

"राजदीप, राजधानी में सब यही सोच रहे होंगे कि महामांत्रिक मुझे राजभवन से उठा ले गया है। मैं अपने पिता को बताऊँगी कि तुमने मांत्रिक के हाथों से मेरी रक्षा की है। पिता अवश्य ही तुम पर अत्यन्त प्रसन्न होकर तुम्हारे साथ मेरा विवाह कर देंगे।" राजकुमारी प्रियंवदा ने कहा।

"लेकिन प्रियंवदा! तुमने इसी प्रकार की बातें अपने उद्यान के प्रहरी जय से भी कही थीं और

उसे यह वचन दिया था कि तुम उसके साथ विवाह करोगी ।'' राजदीप ने कहा ।

''जब तक मैंने तुम्हें नहीं देखा था, तब तक मेरा यही विचार था । उस प्रहरी ने मेरे प्राणों की रक्षा की थी, संभवतः इसी उपकार की भावना से मैंने उसे विवाह का वचन दे दिया । अब मैं कह सकती हूँ कि मैं उससे प्रेम नहीं करती थी । मेरा प्रेम तुम्हारे लिए ही है, राजदीप!'' राजकुमारी प्रियंवदा ने कहा ।

राजदीप कुछ देर सोचता रहा, फिर बोला, ''प्रियंवदा, कुछ भी क्यों न हो, प्रहरी जय के साथ तुम्हें अपना वचन निभाना चाहिए ।''

राजदीप की ये बातें प्रियंवदा को शूल समान जान पड़ीं । उसने कातर होकर पूछा, ''राजदीप, क्या मुझसे विवाह करना तुम्हें पसन्द नहीं है?''

''प्रियंवदा, तुमने जिस दिन मुझे बताया कि तुम्हारी जन्मकुंडली में किसी साधारण व्यक्ति से विवाह करने का योग है, उसी क्षण मेरे हृदय में साधारण व्यक्ति बनने की इच्छा जागृत हुई । मेरे गुरुदेव ने मुझे उपदेश दिया था —''तुम अपकार करनेवाले के साथ भी उपकार करना और कभी भी किसी स्वार्थ-कामना के वशीभूत न होना ।'' पर मैं तुम्हें देखने के बाद उनके उपदेश का पालन न कर सका, कामना के वशीभूत होगया ।'' इतना कहने के बाद राजदीप कुछ क्षणों के लिए मौन होगया, फिर बोला, ''चाहे जो हो, मेरे कारण जय के प्रति अन्याय नहीं होना चाहिए ।''

प्रियंवदा राजदीप को कोई उत्तर न दे सकी । उसने मन में यही निश्चय किया कि राजभवन में पहुँचने के बाद वह जय को बुलाकर उसे राजदीप के बारे में बतायेगी और उसे विवाह के लिए विमुख कर राजदीप के प्रति उसकी स्वीकृति लेगी।

सुरंग की यात्रा आसानी से पूरी होगयी । प्रियंवदा सुरंग के गुप्त द्वार से रात्रि के समय अपने कक्ष में पहुँची । उसने राजदीप से अनुरोध किया कि वह कुछ समय सुरंग में ही रहकर प्रियंवदा के संदेश की प्रतीक्षा करे ।

शयनकक्ष में आकर प्रियंवदा ने संकेत-सूचक घंटी बजायी । दूसरे ही क्षण दस परिचारिकाएँ दौड़कर उसके पास पहुँचीं । राजकुमारी के सकुशल लौट आने की ख़बर कुछ ही क्षणों में सारे अन्तःपुर में फैल गयी । महाराजा कीर्तिसेन

तथा रानी कांतिमती दौड़कर वहाँ आये ।

रानी कांतिमती ने प्रियंवदा को गले लगाकर पूछा, "मेरी प्यारी बिटिया, आज तक तुम कहाँ रहीं? तुम पर क्या-क्या बीती? जल्दी बताओ, बेटी!"

"माँ यह सब एक लंबी कहानी है, मैं फुरसत पाकर सुनाऊँगी । आप पहले मेरे अन्तःपुर के सभी राजभटों को बुला देने की व्यवस्था करें!" प्रियंवदा ने कहा ।

राजा कीर्तिसेन ने कहा, "बेटी, तुम्हारा अपहरण किसने किया है, मुझे सच-सच बताओ! मैं कष्ट देनेवाले उस अन्यायी को जीवित नहीं छोड़ूँगा ।"

राजकुमारी प्रियंवदा ने उन्हें भी सब बता देने का आश्वासन दिया और थोड़ा-सा समय माँगा ।

अन्तःपुर में प्रहरी के रूप में नियुक्त कुल बीस वीर सैनिक थे जो अंतपुर के बाहर तथा राजोद्यान में रहकर अत्यन्त सतर्कता से राजकुमारी की रक्षा करते थे । राजा ने तत्काल सारे प्रहरियों को बुलवा लिया, पर उनमें जय नाम का प्रहरी न था।

प्रियंवदा ने विस्मित होकर अपने पिता से पूछा, "पिताजी, इन प्रहरियों में जय नाम का एक उद्यान-प्रहरी भी होना चाहिए, वह कहाँ है?"

उसके उत्तर में प्रहरियों ने कहा, "राजकुमारी, जय की मंगनी होनेवाली है । वह चार दिन की छुट्टी लेकर अपने गाँव गया हुआ है । कल उसे काम पर लौट आना चाहिए ।"

यह समाचार सुनते ही प्रियंवदा की सारी समस्या हल हो गयी । उसका दिल बल्लियों उछल पड़ा । उसने जमुहाई लेकर कहा, "मुझे गहरी नींद आरही है । मैं विश्राम करना चाहती हूँ ।"

"महाराज, महारानी सहित सब लोग राजकुमारी प्रियंवदा के कक्ष से बाहर चले गये । राजकुमारी ने सुरंग का द्वार खोलकर राजदीप को बुलाया और सारा वृत्तान्त सुनाकर कहा, "अब इस स्थिति में तो तुम्हें मेरे साथ विवाह करने में कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिए ।"

"राजकुमारी, अभी बात स्पष्ट नहीं है । हमारे विवाह के लिए उसकी सहर्ष स्वीकृति भी मिलनी चाहिए ।" राजदीप ने कहा ।

इस वार्ता के पश्चात् राजदीप पुनः सुरंग में

इसके बाद वह सुरंग में राजदीप के पास पहुँची और उसे जय का निर्णय सुनाकर बोली, "क्या अब भी तुम्हें मेरे साथ विवाह करने में आपत्ति है?"

राजदीप ने मुस्कराकर कर प्रियंवदा के साथ विवाह की स्वीकृति दी । इसके बाद प्रियंवदा राजदीप को अपने माता-पिता के पास ले गयी । प्रियंवदा ने असत्य का अधिक आश्रय नहीं लिया। जय की बात उसने पूरी तरह गुप्त रखी और बताया कि वह यों ही सुरंग देखने के लिए उसके अंतिम छोर तक गयी थी, पर वहाँ वह शतनंदन गाँव के द्वार पर मूर्छित होगयी । इसके बाद का सारा वृत्तान्त उसने ज्यों का त्यों सुना दिया ।

राजदीप के प्रभावोत्पादक व्यक्तित्व को देखकर राजा कीर्तिसेन और रानी कांतिमती मन ही मन अत्यन्त प्रसन्न हुए । राजदीप ने किस प्रकार राजकुमारी प्रियंवदा की मदद की इस बात ने उनकी प्रसन्नता में चार चांद लगा दिये । राजा ने कहा, "वत्स, राजदीप! तुमने मेरी पुत्री के लिए अपनी सारी अद्भुत शक्तियों का परित्याग कर दिया और एक सांधारण मनुष्य बन गये ।"

राजा के ये अभ्यर्थनापूर्ण वचन सुनकर राजदीप ने मुस्कराकर कहा, "महाराज, मैं ऐसा मानता हूँ कि अपकार करनेवाले का उपकार तथा बुरे का भला करने के कारण मुझे जो पुण्य प्राप्त हुआ है, उसी के फलस्वरूप मुझे राज्य के साथ राजकुमारी भी प्राप्त हो रही हैं । राजा बनने के बाद भी मैं अपने स्वार्थ को नगण्य और प्रजा के

चला गया । दूसरे दिन सुबह राजा कीर्तिसेन ने जय को यह आदेश भेजा कि वह राजोद्यान से बाहर न जाये ।

प्रियंवदा ने नियत समय पर उद्यान में प्रवेश किया और जय से अन्य कुछ भी न बताकर सीधे प्रशन किया, "जय, तुम कुशल से तो हो न? मैंने सुना है तुम्हारा विवाह पक्का होगया है ।"

"राजकुमारी यह सच है! उस दिन बिना सोचे-विचारे मैंने आपसे विवाह करना स्वीकार कर लिया था, उसके लिए आप मुझे क्षमा करें! मैं आपके योग्य नहीं । अब मेरा विवाह मेरे ही तुल्य एक परिवार में निश्चित होगया है ।" जय ने कहा ।

प्रियंवदा ने जय को प्रसन्नमुख विदा किया ।

कल्याण को मुख्य मानूँगा । अब आपकी आज्ञा की प्रतीक्षा है ।"

राजा किर्तिसेन को राजदीप के वचनों से बड़ी प्रसन्नता हुई । वे कुछ देर सोचते रहने के बाद बोले, "पुत्र! राजा का प्रथम कर्त्तव्य प्रजा का कल्याण ही होता है । यही मेरा विचार भी है । तुम मनसा, वाचा, कर्मणा प्रजा की भलाई करना चाहते हो, इससे बढ़कर और क्या हो सकता है? इसमें मेरी आज्ञा की क्या आवश्यकता है?"

"महाराज! अभी आपने शतनंदन गाँव के बारे में सुना । यदि हमारे राज्य के किसी भी प्रदेश या प्रांतर की प्रजा मूर्ख है तो हमें निस्संकोच यह स्वीकार करना चाहिए कि हम राज्य का शासन भलीभांति नहीं कर पा रहे हैं और हमारे कर्त्तव्य में कहीं भारी चूक हो रही है ।" राजदीप ने कहा ।

"पुत्र! अब तुम मेरे जामाता ही नहीं, इस राज्य के राजा भी बनने जा रहे हो । प्रजा की मूर्खता, अंधविश्वास और उसके दुख-दारिद्र्य को दूर करने की जिम्मेदारी अब तुम्हारी है । मैं तुम्हारे जैसे सत्पात्र को अपनी कन्या और यह राज्य सौंपकर अत्यन्त प्रसन्न हूँ ।" महाराज कीर्तिसेन ने गद्गद् स्वर में कहा ।

प्रियंवदा को एक बात यह भी समझ में आयी कि राजदीप केवल उससे प्रेम करने के कारण ही इस विवाह की स्वीकृति नहीं दे रहा है, बल्कि वह राजपद से प्रजा के कल्याण में लगना चाहता है । उसके अन्दर देश के कल्याण और उत्तम नागरिकों के निर्माण की उत्कट अभिलाषा है । राजदीप के इस पक्ष को जानकर प्रियंवदा का हृदय उसके प्रति सम्मान से भर गया । वह राजदीप के चरणों में झुक गयी और उसे प्रणाम करके बोली, "आप साधारण व्यक्ति नहीं हैं । भावी पीढ़ियों के लिए आपका शासन आदर्श दृष्टान्त प्रस्तुत करेगा ।"

इसके बाद राजदीप और प्रियंवदा का विवाह संपन्न हुआ । राजादीप ने विशाल देश को एकता के सूत्र में बांधा और और अनेक कल्याणकारी आयोजनों के द्वारा पृथ्वी पर स्वर्ग-सुखों की रचना की ।

कायाकल्प

वल्लभनगर में राजा श्वेतनन्द का राज्य था। एक दिन उसने दर्पण में अपना प्रतिबिम्ब देखा, तो उसे अपने चेहरे पर एक दो झुर्रियां दिखाई पड़ीं। अब उसे हर समय यह चिंता सताने लगी कि वह वृधृद होता जा रहा है।

अनेक प्रसिधृद वैद्यों ने राजा श्वेतनन्द को यह आश्वासन दिया कि वे उसकी झुर्रियां अवश्य मिटा देंगे। उन वैद्यों ने राजा का अपार धन खर्च करवाया, अमूल्य औषधियों का उसे सेवन कराया। श्वेतनन्द बड़ी निष्ठा के साथ अपना इलाज करवाता रहा। लेकिन जब भी वह दर्पण में अपना चेहरा देखता, उसे वे झुर्रियां और बड़ी दिखाई देतीं। इस कारण उसकी व्यथा और अधिक बढ़ जाती और वह दुर्बल होता चला जाता।

एक दिन मंत्री मुकुन्दवर्मा ने राजा श्वेतनन्द से कहा, "महाराज! आपने अभी पाँच दशक भी पूरे नहीं किये हैं। इस आयु में आपका स्वास्थय इस प्रकार गिर जाये और वृधृदता का अनुभव करने लगें, यह उचित नहीं है। आप तो हमारे राजा हैं, देश के शासक हैं, आपका असमय वृधृद होना देश के हित में नहीं है। आप स्वस्थ रहेंगे, तभी देश सुखी और समृधृद हो सकेगा। मुझे पता लगा है कि सुवर्णनगर का निवासी वैद्यश्रेष्ठ मलयज कायाकल्प की चिकित्सा में सिधृदहस्त है। यदि आप इस चिकित्सा-पधृदति से नवयौवन प्राप्त करना चाहते हैं, तो वैद्य मलयज की शरण ही लेनी चाहिए।"

मंत्री की बात के उत्तर में राजा ने उदासीनता प्रकट करते हुए कहा, "सुवर्णनगर का राजा सिंहवर्मा हमारा प्रबल शत्रु है। सिंहवर्मा यह कभी सहन नहीं करेगा कि हम उसके राज्य के वैद्य का चिकित्सा-लाभ पायें। वह अवश्य इसमें बाधा पहुँचायेगा।"

विमला लूथरा

"महाराज! हम इस बात को एकदम गुप्त रखेंगे । राज्य के किसी भी व्यक्ति को इसका तनिक भी आभास नहीं मिलेगा । हम धनिक व्यापारियों का वेश धरकर सुवर्णनगर जायेंगे और वैद्यराज मलयज से मिलकर आपकी चिकित्सा के बारे में बात करेंगे ।" मुकुन्दवर्मा ने कहा ।

राजा श्वेतनन्द ने अपनी सहमति दी और वे व्यापारियों का छद्मवेश धारण कर सुवर्णनगर के लिए निकल पड़े । जब वे जा रहे थे तो मार्ग में उन्हें एक बूढ़ा दिखाई दिया । वह पेड़ के नीचे बैठा कोई गीत गुनगुना रहा था ।

उस वृध्द का चेहरा झुर्रियों से भरा हुआ था। देह अत्यन्त क्षीण हो चुकी थी । फिर भी वह अत्यन्त प्रसन्न दिखाई दे रहा था । उस वृध्द की प्रसन्नता देखकर राजा श्वेतनन्द को बड़ा आश्चर्य हुआ ।

राजा ने मंत्री से कहा "मंत्रिवर! इस बूढ़े को इतना अधिक प्रसन्न देखकर मुझे आश्चर्य के साथ ईर्ष्या भी हो रही है । हम इसकी प्रसन्नता का कारण तुरन्त जानना चाहते हैं ।"

राजा श्वेतनन्द और मंत्री मुकुदवर्मा दोनों वृध्द के समीप पहुँचे । राजा श्वेतनन्द ने उस वृध्द से पूछा, "तुम तो अत्यन्त वृध्द और कृश हो । फिर भी तुम एक युवक की भाँति गा रहे हो और प्रसन्न हो । क्या यह संभव है कि एक वृध्द दुर्बल व्यक्ति इतना प्रसन्न रह सके? तुम्हारे पास धन-दौलत भी नहीं है, फिर भी तुम इतने खुश हो । इसका क्या कारण है?"
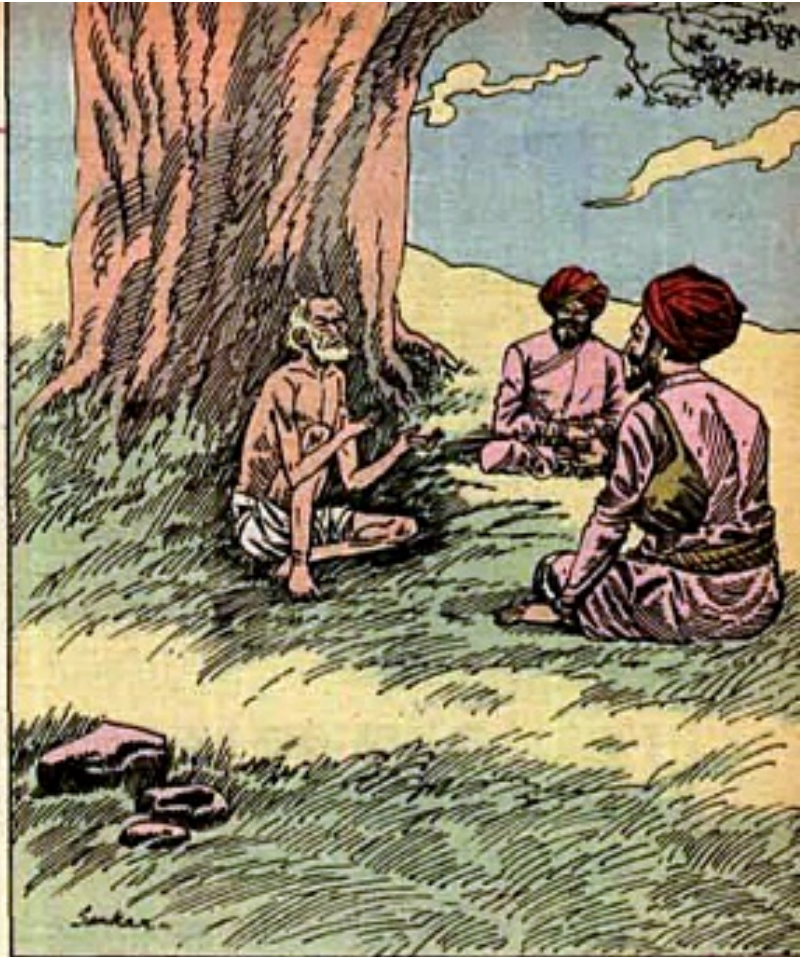
वृध्द ने बड़ी तीक्ष्ण दृष्टि से व्यापारी वेशधारी राजा से पूछा, "क्या मैं सचमुच ही एकदम वृध्द हो चुका हूँ? क्या तुम यह बात निश्चित रूप से कह सकते हो?"

श्वेतनन्द ने हँस कर कहा, "तुम्हारे चेहरे की झुर्रियां और तुम्हारी ठंठ जैसी देह को देखने पर कोई भी सहज ही कह सकता है कि तुम बहुत वृध्द हो चुके हो ।"

"चेहरे पर झुर्रियां? ठूंठ जैसी देह? क्या यह सच है? मैंने अब से साठ वर्ष पूर्व कभी एक-दो बार दर्पण देखा होगा । तब मैं चालीस वर्ष का रहा हूँगा । तबसे आज तक मैंने कभी दर्पण में नहीं देखा । इसलिए मैं नहीं कह सकता कि मुझमें कौन-से परिवर्तन हुए हैं । इस विषय में मुझे कुछ याद भी नहीं है ।" वृध्द ने जवाब दिया।

यह उत्तर सुनकर राजा श्वेतनन्द ने बड़े आश्चर्य से कहा, "इसका मतलब है कि इस समय तुम्हारी आयु सौ वर्ष हो चुकी है?"

वृधृद ने स्वीकृति में अपना सिर हिलाया।

राजा ने उसे अपना परिचय दिया और यह भी बता दिया कि वह सुवर्णनगर क्यों जारहा है।

वृधृद ने मंद मुस्कराकर कहा, "महाराज! कायाकल्प की चिकित्सा के लिए आपको इतनी दूर जाने की आवश्कता नहीं है। चिकित्सा मैं जानता हूँ।" यह कहकर उसने राजा श्वेतनन्द को अपने समीप आने के लिए कहा और उसके कान में फुसफुसाते हुए कोई संदेश दिया।

श्वेतनन्द राजा ने प्रसन्न होकर अपनी थैली में से कुछ सुवर्णमुद्राएं निकालीं और वृधृद की ओर बढ़ायीं।

वृधृद ने उस धन को लेने से इनकार करते हुए कहा, "महाराज! मैंने स्वप्न में भी नहीं सोचा था कि मुझे अपने देश के राजा के दर्शन होंगे। मैं धन्य हुआ। यही मेरा पुरस्कार है। इसलिए मुझे धनरूपी पुरस्कार की आवश्यकता नहीं है।"

इसके बाद राजा और मंत्री अपने नगर को लौट आये। राजा श्वेतनन्द बिना किसी चिकित्सा के स्वास्थ्य लाभ करने लगा। वह सदा स्वस्थ प्रसन्न और उत्साही नज़र आता। राजा के इस परिवर्तन का कारण मंत्री मुकुन्दवर्मा की समझ में नहीं आया। उसने एक दिन राजा से पूछा, "महाराज! क्या मैं जान सकता हूँ कि उस वृधृद ने आपके कान में गुप्त रूप से क्या कहा था? आप उस समय के बाद से अत्यन्त निश्चिंत, प्रसन्न और उत्साही दिखाई दे रहे हैं।"

राजा श्वेतनन्द ने कहा, "मंत्रिवर! बढ़ती आयु के साथ शरीर के भीतर जो परिवर्तन होते हैं, उन्हें देखकर व्याकुल नहीं होना चाहिए। आयु के क्षय में व्याकुलता बहुत बड़ा कारण है। चिंता मनुष्य को असमय बूढ़ा बना देती है। वृधृदावस्था के आगमन के बाद भी जो मनुष्य उसकी बिलकुल चिंता न करता हुआ अपने मन को प्रसन्न रखता है, उसकी आयु अपने आप बढ़ती है, उसे रोग भी नहीं घेरते। उस वृधृद ने मेरा यही कायाकल्प किया था।"

हौलर
दक्षिण अमरीका की हौलर जाति के बन्दर समान आकार के होने पर भी अन्य बन्दरों की तुलना में अन्य जानवरों की अपेक्षा अधिक ज़ोर से चिल्लाते हैं। उनकी जीभ में खोखले एवं पतले खपड़े जैसी एक हड्डी होती है, जो उनके जोर से चिल्लाने में सहायक होती है।
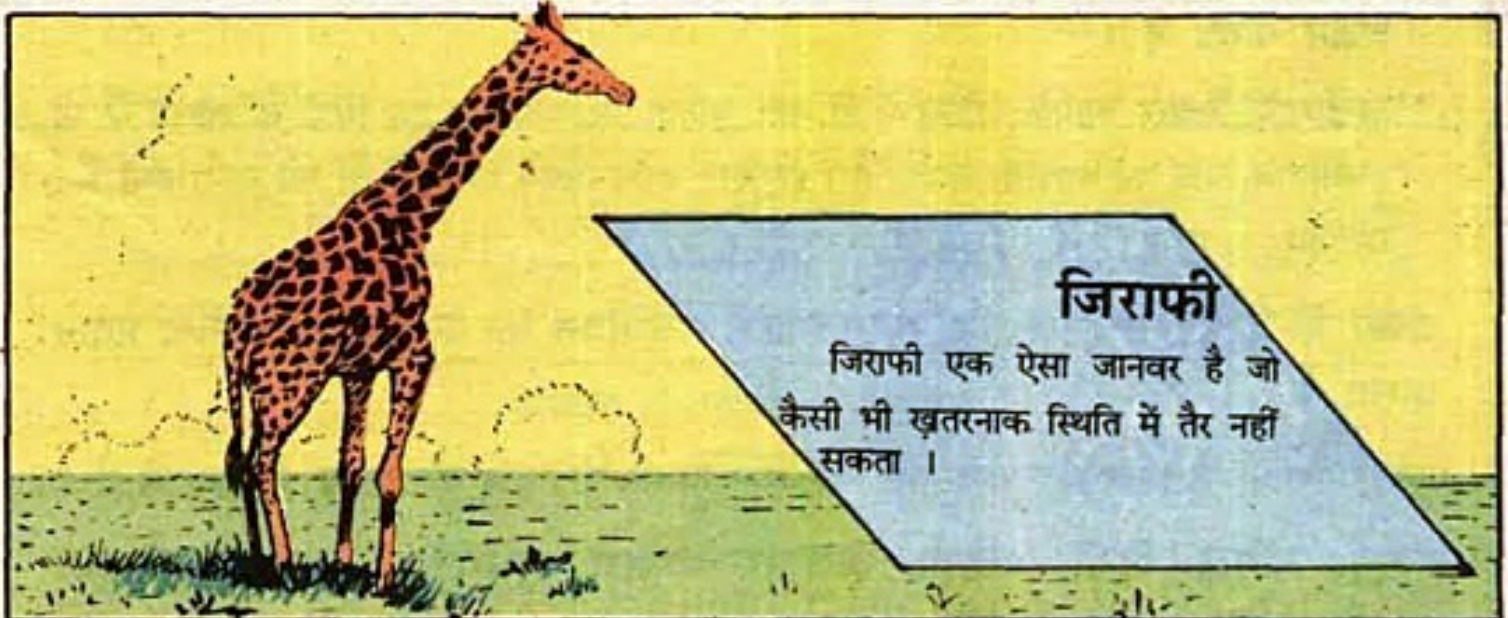
जिराफी
जिराफी एक ऐसा जानवर है जो कैसी भी ख़तरनाक स्थिति में तैर नहीं सकता ।

बड़े-बड़े मगरमच्छ अक्सर पत्थर निगल जाते हैं, ये पत्थर खाना हजम कराने में उनके सहायक होते हैं। लगभग ६.६६ किलोग्राम वज़नदार पत्थरों को निगल कर मगरमच्छ उन्हें जलप्रवाह में बहजाने से रोक लेते हैं और कभी उन्हें जलतल में ज़मीन पर चिपके रहने में मदद देते हैं
पत्थर निगलनेवाले मगरमच्छ

चन्दामामा

मनोरंजक एवं ज्ञानवर्द्धक उत्कृष्ट मासिक पत्र

* चन्दामामा हमारे पुराण व साहित्य के श्रेष्ठ रत्नों को क्रमबद्ध रूप में प्रदान करता है।
* व्यापक दृष्टिकोण को लेकर विश्व साहित्य की अद्भुत काव्य कथाओं को सरल भाषा में प्रस्तुत करता है।
* मृदुहास्य, ज्ञानवर्द्धक तथा मनोरंजक सुन्दर कहानियों द्वारा पाठकों को आकृष्ट करता है।
* हमारी पुराण गाथाओं को प्रामाणिक रूप में परिचय करता है।
* हास्यपूर्ण प्रसंगों तथा व्यावहारिक ज्ञान प्रदान करने वाले शीर्षकों के साथ पाठकों का उत्साह वर्द्धन करता है।
* चन्दामामा केवल आपके जीवन में ही नहीं बल्कि आपके बन्धु एवं मित्रों के जीवन में भी रचनात्मक पात्र का व्यवहार करता है। इसलिए आप अपने घनिष्ट मित्रों को चन्दामामा भेंट कीजिए ! उपहार में दीजिए !

बच्चों के लिए प्रस्तुत चन्दामामा, पाठकों में नवयौवन का उत्साह एवं आनन्द प्रदान करता है।

तेरह भाषाओं में प्रकाशित चन्दामामा का साप किसी भी भाषा का ग्राहक बन सकते हैं !

तेलुगु, तमिल, हिन्दी, अंग्रेज़ी, असामी, बंगाली, गुजराती, कन्नड, मलयालम, मराठी, उडिया, पंजाबी और संस्कृत।

वार्षिक चन्दाः रु. ३०-००

आप किस भाषा का चन्दामामा चाहते हैं, इसका उल्लेख करते हुए निम्न लिखित पते पर अपना चन्दा भेजिए:

डाल्टन एजेन्सीस

चन्दामामा बिल्डिंग्स,

वडपलनी, मद्रास-६०० ०२६.

फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कार ५०)

पुरस्कृत परिचयोक्तियाँ दिसम्बर १९८७ के अंक में प्रकाशित की जायेंगी ।

Madan Gopal

P. S. Girota

★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियाँ एक शब्द या छोटे वाक्य में हों। ★ अक्तूबर १० तक परिचयोक्तियाँ प्राप्त होनी चाहिए। ★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) ५० रु. का पुरस्कार दिया जाएगा। ★ दोनों परिचयोक्तियाँ केवल कार्ड पर लिखकर निम्न पते पर भेजें: चन्दामामा फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता, मद्रास-२६

अगस्त के फोटो - परिणाम

प्रथम फोटो : मुसीबत से लड़ो !

द्वितीय फोटो : जीवन में आगे बढ़ो !!

प्रेषक : श्री दिलीप, राजकीय औषधालय घोसी, जिला-जहानाबाद (बिहार) ८०४४०६

चन्दामामा

भारत में वार्षिक चन्दा : रु. ३०-००

चन्दा भेजने का पता :

डॉल्टन एजेन्सीस, चन्दामामा बिल्डिंग्स, वडपलनी, मद्रास-६०० ०२६

अन्य देशों के चन्दे सम्बन्धी विवरण के लिए निम्न पते पर लिखिये :

चन्दामामा पब्लिकेशन्स, चन्दामामा बिल्डिंग्स, वडपलनी, मद्रास-६०० ०२६

Printed by B.V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., 188 N.S.K. Salai, Madras 600 026 (India) and Published by B. VISHWANATHA REDDI on behalf of CHANDAMAMA PUBLICATIONS, Chandamama Buildings, Vadapalani, Madras 600 026 (India). Controlling Editor: NAGI REDDI.

No 'flip and discard' magazine

"An issue of The Heritage is generally read more than once by its readers... usually, read in depth. Over 90% of Heritage readers preserve their copy..."

– from an IMRB survey conducted in Oct. 1986

It's an unusual magazine. It has a vision for today and tomorrow.

It features ancient cities and contemporary fiction, culture and scientific developments, instead of filmstar interviews and political gossip. And it has found a growing readership, an IMRB survey reveals. Professionals, executives and their families are reading The Heritage in depth – 40% from cover to cover, 42% more than half the magazine.

More than 80% of The Heritage readers are reading an issue more than once.

And over 90% are slowly building their own Heritage collection.

Isn't it time you discovered why?

CMP-2155

So much in store, month after month.

पॉपिन्स का स्वाद इन्हें इतना पसंद आया राम और श्याम को खूब गले लगाया.

राम और श्याम सदा पॉपिन्स रखते साथ अपने-आप ही बढ़ाते उन तक दोस्ती का हाथ.